अभिषेक विधि

संकलनकार

परम पूज्य जिनभक्तितत्पर,
पट्टाधीशाचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

अभिषेकविधि

संकलनकार :– परम पूज्य जिनेन्द्रोपासक, पट्टाधीशाचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

आवृत्ति :– १ **प्रति** :– १००० **प्रकाशन** :– १९-३-२०२०

अवसर

परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज (अंकलीकर) की सुविशुद्ध परम्परा के चतुर्थ-पट्टाधीश, परम पूज्य आर्षमार्गशिरोमणि, जिनशासन-प्रदीप, विद्या-वाचस्पति, तपश्चर्या-चक्रवर्ती, परम्पराचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज का पचासवाँ जन्मदिवस (१९-३-२०२०)

पुनः प्रकाशन हेतु अर्थसहयोग – रुपये २५/– मात्र

प्राप्तिस्थान –

भरतकुमार इन्दरचन्द पापड़ीवाल
३-४-९, पानदरिबा रोड़, अप्पा हलवाई के पास
औरंगाबाद (महाराष्ट्र) ४३१००१
फोन = ०२४०-२३६८७८५
मोबाईल = ०९३७११४११०४
sanmati28@yahoo.com
suvidhiguru@gmail.com
Website : www.jaingranths.com
Website : www.vimalsagargranths.com

ABHISHEK VIDHI

CHATURTHA-PATTADHISHACHAARYASHREE SUVIDHISAGAR JI MAHARAJ

समर्पित

परम पूज्य गुणगणसमालंकृत, स्याद्वादधर्माराधक, यतिपति, महाव्रतादिमूलोत्तरगुणपालक, शान्तमूर्ति, सम्यक्त्व–शिरोमणि, चारित्र–चक्रवर्ती, प्रज्ञाधनेश, मुनिकुंजर, वर्द्धमानसच्चारित्रधारक, आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज (अंकलीकर) के पट्टाधीश, परम पूज्य स्वात्ममहाविद्यानायक, गुणगणनिलय, आर्षमार्ग–प्रचारक, अष्टादशभाषाभाषी, मितभाषी, संसार–शरीर–भोगनिर्विण्ण, चलाचलतीर्थनिर्माता, तीर्थभक्त–शिरोमणि, समताधन, करुणाकुबेर, आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज के पट्टाधीश, परम पूज्य महातपोमार्तण्ड, रत्नत्रयशिखामणि, आगमकोविद, गुरुभक्तशिरोमणि, आर्षचर्याधारक, समतासेवी, युगाचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज की पावन स्मृति में .....

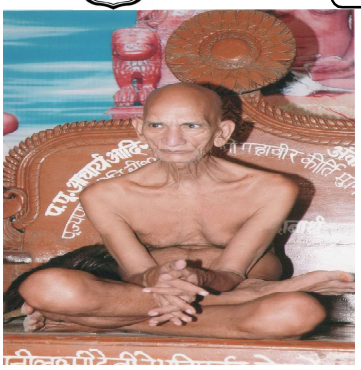

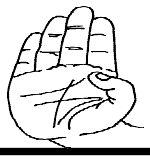

आशीर्वाद

यह भारतभूमि सदा ही साधु-सन्तों के अवतरण, निष्क्रमण, आचरण एवं साधना से पवित्र/पावन/पुनीत होती रही है। भूतकाल की भाँति वर्तमानकाल में भी अनेक भव्य जीव अपनी आत्मा का उद्धार कर रहे हैं। उन्हीं में से मुनिकुंजर, समाधि-सम्राट्, अप्रतिम उपसर्गविजेता, आदर्श तपस्वी, महामुनि, दक्षिण भारत के वयोवृद्ध सन्त, आचार्य-परमेष्ठी श्री आदिसागर जी महाराज (अंकलीकर), उनके पट्टाधीश, आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज, उनके शिष्य वात्सल्य-रत्नाकर, आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज-इन महापुरुषों की जीवनप्रणाली आगमोक्त रही है। इन्होंने स्वात्महित के साथ परहित भी किया है तथा अपनी तपोपूत आत्मा से भव्य आत्माओं को उपदेश दिया है। वह उपदेश ग्रन्थों के रूप में लिपिबद्ध है।

आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज (अंकलीकर) ने भाद्रपद शुक्ला ४, वि. सं. १९२३ सन् १८६६ को महाराष्ट्र के अंकली ग्राम में जन्म लिया। मगसिर शुक्ला २, वि. सं. १९७० सन् १९१३ को सिद्धक्षेत्र कुन्थलगिरि पर मुनिदीक्षा ली। जेष्ठ शुक्ला ५, वि. सं. १९७२ सन् १९१५ को जयसिंगपुर (काडगीमला-उदगाँव) में आचार्यपद को ग्रहण किया। फाल्गुन कृष्णा १३, वि. सं. २००० सन् १९४४ को उदगाँव (कुंजवन) में समाधिमरण किया। उन्होंने अपने दीक्षाकाल में **प्रायश्चित्त विधान** (प्राकृत) को भाद्रपद शुक्ला ५, वि. सं.१९७२ सन् १९१५, **दिव्यदेशना** (कन्नड) को मगसिर शुक्ला ११, वि. सं.१९९९ सन् १९४१, **जिनधर्मरहस्य** (संस्कृत) को मगसिर शुक्ला २, वि.सं.१९९९ सन् १९४२, **शिवपथ** (संस्कृत) को भाद्रपद शुक्ला ४, वि. सं. २००० सन् १९४३, **वचनामृत** (मराठी) को माघ शुक्ला १४, वि. सं. २०००

सन् १९४३, **उद्‌बोधन** (कन्नड) फाल्गुन शुक्ला ११, वि. सं. २००० सन् १९४३, **अन्तिम दिव्यदेशना** (कन्नड) को फाल्गुन कृष्णा १३, वि. सं. २००१ सन् १९४४ में पूर्ण किया।

आचार्यश्री के पट्टाधीश, आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज ने वैशाख कृष्णा ९, वि. सं. १९६७ सन् १९१० को फिरोजाबाद में जन्म लिया। फाल्गुन शुक्ला ११, वि. सं. २००० सन् १९४३ को उदगाँव में मुनिदीक्षा ग्रहण की। आश्विन शुक्ला १०, वि. सं. २००० सन् १९४३ को आचार्यपद ग्रहण किया। माघ कृष्णा ६, वि. सं. २०२८ सन् १९७२ को मेहसाना में समाधि प्राप्त की। आचार्यश्री ने परम्परागत ज्ञान से अपने दीक्षाकाल में **प्रायश्चित्त विधान** (संस्कृत) को फाल्गुन शुक्ला १३, वि. सं. २००९ सन् १९५२, **वचनामृत** (अंग्रेजी) **वर्डस् ऑफ नेक्टर** (Words of Nector) को मगसिर कृष्णा १०, वि. सं. २००० सन् १९४३, **धर्मानन्द श्रावकाचार** (हिन्दी) को चैत्र शुक्ला १३, वि. सं. २००० सन् १९४३, **प्रबोधाष्टक** (संस्कृत स्वोपज्ञ टीकासहित) को फाल्गुन कृष्णा ११, वि. सं. २००४ सन् १९४७, **शिवपथ टीका** को मगसिर कृष्णा १०, वि. सं. २००४ सन् १९४७ **जिनधर्मरहस्य** (हिन्दी टीका) को फाल्गुन शुक्ला १३, वि. सं. २०१० सन् १९५४, **चतुर्विंशति स्तोत्र** (संस्कृत) को मगसिर शुक्ला ११, वि. सं. २०१८ सन् १९६१ इनकी रचना की।

आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज ने आश्विन कृष्णा ७, वि. सं. १९७२ सन् १९१५ को कोसमा में जन्म लिया। फाल्गुन शुक्ला १३, वि. सं. २००९ सन् १९५२ को सोनागिरि में मुनिदीक्षा ग्रहण की। मगसिर कृष्णा २, वि. सं. २०१८ सन् १९६० को टुण्डला में आचार्यपद प्राप्त किया। पौष कृष्णा १२, वि. सं. २०७१ सन् १९९४ को सम्मेदशिखर में समाधिमरण किया। आपने दीक्षाकाल में प्राप्त हुए परम्परागत ज्ञान को लिपिबद्ध किया। **जिनवाणी का वैभव** (हिन्दी) को कार्तिक शुक्ला १५, वि. सं. २००८ सन् १९५१, **हे आचार्य आदिसागर अंकलीकर** (हिन्दी) कार्तिक कृष्णा १०, वि. सं. २०३९ सन् १९८२, **सन्देश** (हिन्दी) आश्विन शुक्ला ९, (२३ अक्तूबर) को वि. सं. २०७० सन् १९९३ को प्रतिपादन कर पूर्ण किया।

सन्देश –

हमारी आचार्य परम्परा में प्रथम मुनिकुंजर आचार्य आदिसागर जी (अंकलीकर) हैं। आप आचार्य महावीरकीर्ति जी के दीक्षागुरु हैं। आचार्य आदिसागर जी (अंकलीकर)

ने अपना आचार्यपद महावीरकीर्ति जी को दिया है। जैन समाज में आचार्य आदिसागर जी (अंकलीकर) की परम्परा और आचार्य शान्तिसागर जी (दक्षिण) की परम्परा इस युग में निर्बाध चली आ रही है। समाज का कर्तव्य है कि किसी प्रकार का विवाद न करके दोनों आचार्य परम्परा को आगमसम्मत मान कर वात्सल्य से धर्मप्रभावना करें।

यह संकलित कृति है। इस कृति के माध्यम से जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक एवं तीन प्रकार की शान्तिधाराओं का संकलन किया गया है।

श्रावकधर्म में दान और पूजा को मुख्य आवश्यकों के रूप में परिगणित किया गया है। पूजा भी नित्य और नैमित्तिक के भेद से दो प्रकार की है। दोनों ही प्रकार की पूजा अभिषेकपूर्वक ही होती है। अतः पूजन के समस्त अंगों में अभिषेक की प्रधानता सुनिश्चित् है।

मन्त्रों का उच्चारण करते हुए जिनेन्द्र भगवान पर जलादि द्रव्यों का सेचन करने को अभिषेक कहते हैं। पण्डितप्रवरश्री पन्नालाल जी सोनी ने अठारह अभिषेकपाठों का संकलन किया है। उसमें अनेक पाठों की टीका भी उपलब्ध है। उन सभी का अवलोकन करने पर अभिषेक की विधि और द्रव्यों का निर्णय हो जाता है। भव्य जीवों का कर्त्तव्य है कि वे आगम के अनुकूल अपनी मान्यता बना कर तदनुसार अपनी क्रियाओं को करने का प्रयत्न करें, जिससे असंख्यातगुणित कर्मनिर्जरा होती है। परिणामों की विशुद्धि, इष्ट सामग्रियों का लाभ, पापकर्मों की निर्जरा और पुण्यकर्म का संचय करने के लिए अभिषेक महत्त्वपूर्ण किया है। अतः प्रयत्नपूर्वक इस क्रिया का अनुपालन किया जाना चाहिए।

इस कृति के संकलनकार, आचार्य सुविधिसागर जी हैं। आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज (अंकलीकर) से आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज ने ज्ञान को प्राप्त किया। आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज से आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज ने ज्ञान प्राप्त किया। आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज तथा आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज से मुझे जो ज्ञान प्राप्त हुआ, उसे सुविधिसागर जी ने प्राप्त किया है। इस प्रकार हमारे शिष्य ने परम्परागत ज्ञान प्राप्त करके प्रस्तुत कृति को संकलित किया है।

इस प्रकाशन के लिए मेरा शुभाशीर्वाद है।

– आचार्य सन्मतिसागर

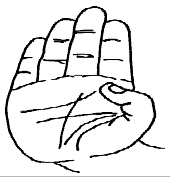

आशीर्वाद

आचार्य-परमेष्ठी, महातपस्वी, सन्मतिसागर जी महाराज के परम शिष्य, पट्टाधीश, आचार्य सुविधिसागर जी महाराज को मेरा प्रतिनमोऽस्तु।

आपके प्रति मेरी मंगल भावना।

परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज (अंकलीकर) की सुविशुद्ध परम्परा के चतुर्थ-पट्टाधीश, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज बने। ईसवी सन् २०१३ में उनका वर्षायोग हमारे साथ कुन्थुगिरि में हुआ। सुविधिसागर जी महाराज अनुशासनप्रिय, विनयी, स्वाध्यायशील, तपोनिष्ठ और आर्षपरम्परा के उपासक श्रमणरत्न हैं। उनकी दिनचर्या का बहुभाग ग्रन्थों का अनुवाद और सम्पादन में ही जाता है। उनके द्वारा लिखित, रचित और अनुवादित पचहत्तर ग्रन्थों का विमोचन हमारे सामने क्षेत्र पर दिनांक ११-७-२०१३ को हुआ था।

तपस्वी-सम्राट्, आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के उत्तराधिकारी पद को प्राप्त, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज के पचासवें जन्मजयन्ती दिवस के अवसर पर दिनांक १९-३-२०२० को संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंशभाषीय देढ़ सौ ग्रन्थ अनुवादित कर प्रकाशित करने की योजना हमारे समक्ष प्रस्तुत की गई। उनकी यह श्रुतसाधना मन को प्रसन्न करती है। ऐसे सांस्कृतिक कार्य मानवीय संस्कृति के लाभदायक हैं।

उनका यह लक्ष्य पूर्ण हों, वे निरन्तर आत्मकल्याण के मार्ग में प्रगति करें, उनका रत्नत्रय और स्वास्थ्य भी ठीक रहें, उनके द्वारा आर्षपरम्परा की सेवा होती रहें-ऐसी मेरी भावना है व आशीर्वाद भी है। आपको मेरा प्रतिनमोऽस्तु।

गणधराचार्य कुन्थुसागर

किञ्चिदुक्तिः

अभि उपसर्गपूर्वक **सिच्** धातु से **घञ्** प्रत्यय का संयोग करने पर अभिषेक शब्द का निर्माण होता है। छिड़कना, पानी के छींटें देना, राज्यतिलक करना, मन्त्रपूर्वक भगवान का जलादिद्रव्यों से सिंचित करना इत्यादि अर्थों में अभिषेक शब्द प्रयुक्त होता है।

अभिषेक पूजा का प्रथम अंग है। अभिषेक के द्रव्य कौनसे हैं? इस विषय में दिगम्बर अनुयायियों में दो मत हैं। आचार्यश्री वामदेव जी महाराज ने भावसंग्रह में अभिषेक की विधि का कथन करते हुए लिखा है-

ततः कुम्भं समुद्धार्य, तोयचोचेक्षुसद्रसैः।
सदघृतैश्च ततो दुग्धैर्दधिभिः स्नापयेज्जिनम्।।४८३।।
तोयैः प्रक्षाल्य सच्चूर्णैः, कुर्यादुद्वर्त्तनक्रियाम्।
पुनर्नीराजनं कृत्वा, स्नानं कषायवारिभिः।।४८४।।
चतुष्कोणस्थितैः कुम्भैस्ततो गन्धाम्बुपूरितैः।
अभिषेकं प्रकुर्वीरन्, जिनेशस्य सुखार्थिनः।।४८५।।
स्वोत्तमाङ्गं प्रसिंच्याथ, जिनाभिषेकवारिणा।
जलगन्धादिभिः पश्चादर्चयेद्बिम्बमर्हतः।।४८६।।

अर्थात् :- अनन्तर कलश उठा कर जल, नारियल, ईख के उत्तम रस, शुद्ध घी तथा दूध और दही से जिनाभिषेक करें। जलों से प्रक्षालित कर अच्छे चूर्ण से उद्वर्तन क्रिया को करें। पुनः आरती उतार कर गेरुए जल से स्नान कराएँ। अनन्तर सुखार्थी चारों कोनों पर स्थित सुगन्धित जल से भरे हुए कुम्भों से जिनेश का अभिषेक करें। अनन्तर जिनाभिषेक के जल से अपने सिर को सींच कर जल-गन्धादि से अर्हन्त भगवान के बिम्ब की अर्चना करें।

इस कृति में आचार्यश्री अभयनन्दी जी महाराज के द्वारा लिखित अभिषेकपाठ का तथा तीन शान्तिधाराओं का संकलन किया गया है।

इस कृति का निर्माण करने में प्रत्यक्ष और परोक्षरूप से सहयोग प्रदान करने वाले समस्त सहयोगियों को मेरा आशीर्वाद।

अंकलीकर-परम्परा का चतुर्थ-पट्टाधीश
आचार्य सुविधिसागर

मंगलाष्टकम्

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वरा-
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः।
श्री सिद्धान्त-सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥१॥
श्रीमन्नम्रसुरासुरेन्द्रमुकुट-प्रद्योतरत्नप्रभा,
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥२॥
सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्रीनगराधिनाथजिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयः श्र्यालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥३॥
नाभेयादिजिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु-प्रतिविष्णु-लाङ्गलधराः सप्तोत्तराः विंशति-
स्त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्ठिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥४॥
देव्योऽष्टौ च जयादिका द्विगुणिता विद्यादिका देवताः,
श्री तीर्थङ्करमातृकाश्च जनका यक्षाश्च यक्ष्यस्तथा।
द्वात्रिंशत्त्रिदशाधिपास्तिथिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधा,
दिक्पाला दश चैत्यमी सुरगणाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥५॥
ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसां वृद्धिङ्गताः पञ्च ये,
ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकुशला येऽष्टौविधाश्चारणाः।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥६॥
कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्यतुग् जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम्।

शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो-
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्।।७।।
ज्योतिर्व्यन्तरभावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा वक्षाररूप्याद्रिषु।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम्।।८।।
यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो-
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा सम्भावितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मङ्गलम्।।९।।
इत्थं श्रीजिनमङ्गलाष्टकमिदं सौभाग्यसम्पत्प्रदं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणामुषः।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि।।१०।।

।। इति श्री मङ्गलाष्टकस्तोत्रम् ।।

सूचना :-

प्रत्येक श्लोक के उपरान्त पुष्पांजली का क्षेपण करना चाहिए।

प्रायः **अभिषेक** के स्थान पर **प्रक्षाल** शब्द का प्रयोग भक्तजनों के द्वारा किया जा रहा है। यह सर्वथा अनुचित् है।

अभि उपसर्गपूर्वक **सिच्** धातु के साथ **घञ्** प्रत्यय का संयोग करने पर अभिषेक शब्द का निर्माण होता है। मूर्ति आदि का जलसिंचन के द्वारा प्रतिष्ठापन करने को अभिषेक कहते हैं।

प्रक्षाल शब्द का निर्माण **प्र** उपसर्गपूर्वक **क्षल्** धातु के साथ **किध्** और **ल्युट्** प्रत्यय का संयोग करने पर होता है। नपुंसकलिंगी प्रक्षाल शब्द का अर्थ है-धोना, माँजना, स्वच्छ करना।

यह तो सभी स्वीकार करेंगे कि जिनप्रतिमा को कोई धोता अथवा माँजता नहीं है। अतः प्रक्षाल शब्द का प्रयोग करने के स्थान पर अभिषेक शब्द का प्रयोग करना चाहिए।

सकलीकरणम्

(निम्नांकित श्लोक को पढ़ कर पुष्पांजली क्षेपण करना चाहिए।)

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसङ्घसुदृशां सुकृतैकहेतु–
र्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाभ्यधायि।।

ॐ ह्रीं क्षीं भूः स्वाहा स्नपनप्रस्तावनाय पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

(आगे लिखे हुए श्लोक को पढ़ कर आभूषण और यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए।)

श्रीमन्मन्दरसुन्दरे (मस्तके) शुचिजलैर्धौतैः सदर्भाक्षतैः,
पीठे मुक्तिवरं निधाय रचितं त्वत्पादपद्मस्रजः।

सकलीकरण

जगत्त्रय–ईशम् तीन जगत् के ईश्वर, **श्रीमत्** अन्तर्बाह्यलक्ष्मी से सम्पन्न, **स्याद्वादनायकम्** स्याद्वाद के नायक, **अनन्त चतुष्टय–अर्हम्** अनन्त चतुष्टय के स्वामी, **जिनेन्द्रम्** जिनेन्द्र को **अभिवन्द्य** नमस्कार करके **मया** मेरे द्वारा **मूलसङ्घ–सुदृशाम्** मूलसंघ के अनुसार **सुदृशाम्** सम्यग्दृष्टि जीवों के **सुकृत** पुण्य की **एकहेतुः** एकमात्र कारणस्वरूप **एषः** यह **जैनेन्द्रयज्ञविधिः** जिनेन्द्रदेव की पूजाविधि **अभ्यधायि** कही गई है।

श्रीमत् शोभावान **मन्दर** मेरुपर्वत के **सदर्भाक्षतैः** श्रेष्ठ दर्भ एवं अक्षत से युक्त, **शुचि** पवित्र **जलैः** जल से **धौतैः** प्रक्षालित, **सुन्दरे** सुन्दर **पीठे** पीठ पर **मुक्तिवरम्** मुक्ति के नायक को **निधाय** स्थापित करके **अहम्** मैं **इन्द्रः** इन्द्र हूँ–

इन्द्रोऽहं निजभूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे,
मुद्राकङ्कणशेखराण्यपि तथा जन्माभिषेकोत्सवे।।

(**जन्माभिषेकोत्सवे** के स्थान पर **जैनाभिषेकोत्सवे** पाठ भी पाया जाता है।)

ॐ ह्रीं श्वेतवर्णे सर्वोपद्रवहारिणि सर्वजनमनोरञ्जिनि परिधानोत्तरीयं धारिणि हं हं झं झं सं सं पं पं परिधानोत्तरीयं धारयामि स्वाहा।

ॐ नमो परमशान्ताय शान्तिकराय पवित्रीकृतायाहं रत्नत्रयस्वरूपं यज्ञोपवीतं धारयामि मम गात्रं पवित्रं भवतु ह्रीं नमः स्वाहा।

तिलक लगाने का श्लोक

सौगन्ध्यसङ्गतमधुव्रतझंकृतेन,
संवर्ण्यमानमिव गन्धमनिन्द्यमादौ।
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्यं,
पादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानाम्।।

इस प्रतिज्ञा के साथ **जैनाभिषेक-उत्सवे** जिनेन्द्र भगवान के उत्सव के समय में **निज-आभूषणार्थकम्** अपने आभूषणस्वरूप **रचितम्** रची गई **त्वपादपद्मस्रजः** आपके चरण-कमलों में रखी हुई माला को **इदम्** इस **यज्ञोपवीतम्** यज्ञोपवीत को **तथा** तथा **मुद्रा** मुद्रा, **कङ्कण** कंकण, **शेखराणि** मुकुट को **अपि** भी **दधे** धारण करता हूँ।

विशेष :-

जैनाभिषेकोत्सवे के स्थान पर **जन्माभिषोत्सवे** पाठ भी पाया जाता है। अर्थ करते समय **इव (के समान)** इस अव्यय का अध्याहार कर लेना चाहिए। जन्माभिषेक के समय में इन्द्र ने जिस प्रकार मुकुट आदि धारण किए थे, मैं जैनाभिषेक के समय में धारण करता हूँ।

विबुध-ईश्वरवृन्द-वन्द्यम् देवेन्द्रों के समूह के द्वारा वन्दनीय **जिनोत्तमानाम्** श्रेष्ठ जिनदेव के **पादारविन्दम्** चरण-कमल में **अभिवन्द्य** नमस्कार करके **आदौ** आरम्भ में **सौगन्ध्यसङ्गत** सुगन्धि के कारण आए हुए **मधुव्रत-झंकृतेन**

इति श्री तिलकं करोमि स्वाहा।

भूमिप्रक्षालन

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता,
नागा प्रभूतबलदर्पयुता भुवोऽधाः।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां,
प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम्।।

ॐ ह्रीं जलेन भूमिशुद्धिं करोमि स्वाहा।

पीठप्रक्षालन

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः,
प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम्।
अत्युद्यमुद्यतमहं जिनपादपीठं,
प्रक्षालयामि भवसम्भवतापहारि।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन पीठप्रक्षालनं करोमि स्वाहा।

भ्रमरों के समूह द्वारा मधुर शब्द से **संवर्ण्यमानम्** प्रशंसित किए गए के **इव** समान **अनिन्द्यम्** सर्वश्रेष्ठ **गन्धम्** गन्ध का **आरोपयामि** आरोपण करता हूँ।

इह इसलोक में **ये** जो **केचित्** कोई **प्रभूतबलदर्पयुताः** अत्यन्त बल एवं दर्प से युक्त **भुवोधाः** नीचे उत्पन्न **दिव्यकुलप्रसूताः** दिव्य कुल में उत्पन्न हुए **नागाः** नागदेव **सन्ति** हैं, **अमृतेन** जल से **स्नपनस्य** अभिषेक की **भूमिम्** भूमि को **प्रक्षालयामि** प्रक्षालित करता हूँ।

सुरवरैः श्रेष्ठ देवों ने **क्षीरार्णवस्य** क्षीरसमुद्र के **पयसाम्** जल के **शुचिभिः** निर्मल **प्रवाहैः** प्रवाह से **भवसम्भवतापहारि** संसार में उत्पन्न सन्ताप का हरण करने वाले तथा **अत्युद्यम्** अत्यन्त उन्नत, **यत्** जिस **जिनपादपीठम्** जिनेन्द्र के पादपीठ का **अनेकवारम्** अनेक बार **प्रक्षालितम्** प्रक्षालन किया है, **उद्यतम्** तत्पर हुआ **अहम्** मैं उसका **प्रक्षालयामि** प्रक्षालन करता हूँ।

श्रीकारलेखन

श्री शारदा-सुमुखनिर्गतबीजवर्ण,
श्री मङ्गलीकवरसर्वजनस्य नित्यम्।
श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य विनाशविघ्नं,
श्रीकारवर्णलिखितं जिनभद्रपीठे।।

ॐ ह्रीं श्रीकारलेखनं करोमि स्वाहा।

अग्निप्रज्वालनक्रिया

दुरन्तमोहसन्तानकान्तारदहनक्षमम्।
दर्भैः प्रज्वालयाम्यग्निं, ज्वालापल्लविताम्बरम्।।

ॐ ह्रीं अग्निं प्रज्वालयामि स्वाहा।

दिक्पालों का आह्वान

इन्द्राग्निदण्डधरनैर्ऋतपाशपाणि–
वायूत्तरेण शशिमौलिफणीन्द्रचन्द्राः।

श्री शारदासुमुखनिर्गत श्री शारदा के मुख से निकले हुए, **सर्वजनस्य** सभी जीवों के लिए **नित्यम्** सदैव **श्रीमङ्गलीकवर** उत्तम लक्ष्मी एवं मंगलस्वरूप, **श्रीमत्** शोभा से सम्पन्न (जो जाप करता है) **तस्य** उसके **विनाश-विघ्नम्** विनाशकारी विघ्न **स्वयम्** स्वयं **क्षयति** नष्ट हो जाते हैं-ऐसे **श्रीकारवर्ण** श्रीकार वर्ण को मैंने **जिनभद्रपीठे** जिनेन्द्र के भद्रपीठ पर **लिखितम्** लिखा है।

दुरन्तमोहसन्तानकान्तारदहनक्षमम् अत्यन्त कठिनता से जिनका अन्त होता है-ऐसे मोह की सन्तानरूपी वन को जलाने में सक्षम, **ज्वालापल्लवित-अम्बरम्** ज्वालाओं से आकाश को पल्लवित करने वाले **अग्निम्** अग्नि को मैं **दर्भैः** दर्भ के द्वारा **प्रज्वालयामि** प्रज्वलित करता हूँ।

इन्द्र-अग्नि-दण्डधर-नैर्ऋत-पाशपाणि-वायु-तोरण-शशिमौलि-फणीन्द्र-चन्द्राः हे इन्द्र, अग्नि, यम, नैर्ऋत, वरुण, पवन, कुबेर, ऐशान, धरणेन्द्र

आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिह्नाः,
स्वं-स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके।।

दिक्पालों के मन्त्र

ॐ आं क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ-आगच्छ इन्द्राय स्वाहा।।१।।
ॐ आं क्रौं ह्रीं अग्नि आगच्छ-आगच्छ अग्नये स्वाहा।।२।।
ॐ आं क्रौं ह्रीं यम आगच्छ-आगच्छ यमाय स्वाहा।।३।।
ॐ आं क्रौं ह्रीं नैऋत आगच्छ-आगच्छ नैऋताय स्वाहा।।४।।
ॐ आं क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ-आगच्छ वरुणाय स्वाहा।।५।।
ॐ आं क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ-आगच्छ पवनाय स्वाहा।।६।।

और सोम! **जिनप-अभिषेके** जिनेन्द्रदेव अभिषेक में **सानुचराः** अपने अनुचर और **सचिह्नाः** चिह्नसहित **इह** यहाँ **आगत्य** आकर **यूयम्** आप **स्वं-स्वम्** अपना-अपना **बलिम्** पूजा का भाग **प्रतीच्छत** ग्रहण कीजिए।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **इन्द्र** हे इन्द्र देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **इन्द्राय** इन्द्र को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **अग्नि** हे अग्नि देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **अग्नये** अग्नि को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **यम** हे यम देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **यमाय** यम को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **नैऋत** हे नैऋत देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **नैऋताय** नैऋत को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **वरुण** हे वरुण देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **वरूणाय** वरुण को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **पवन** हे पवन देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **पवनाय** पवन को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

ॐ आं क्रौं ह्रीं कुबेर आगच्छ-आगच्छ कुबेराय स्वाहा।।७।।
ॐ आं क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ-आगच्छ ऐशानाय स्वाहा।।८।।
ॐ आं क्रौं ह्रीं धरणेन्द्र आगच्छ-आगच्छ धरणेन्द्राय स्वाहा।।९।।
ॐ आं क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ-आगच्छ सोमाय स्वाहा।।१०।।

अर्घ्य

नाथ! त्रिलोकमहिताय दशप्रकार-
धर्माम्बुवृष्टिपरिषिक्तजगत्त्रयाय।
अर्घ्यं महार्घ्यगुणरत्नमहार्णवाय,
तुभ्यं ददामि कुसुमैर्विशदाक्षतैश्च।।

ॐ ह्रीं इन्द्रादिदशदिक्पालकेभ्य इदमर्घ्यं पाद्यं गन्धं दीपं धूपं चरुं बलिं स्वस्तिकमक्षतं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतां-प्रतिगृह्यतां स्वाहा।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **कुबेर** हे कुबेर देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **कुबेराय** कुबेर को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **ऐशान** हे ऐशान देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **ऐशानाय** ऐशान को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **धरणेन्द्र** हे धरणेन्द्र देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **धरणेन्द्राय** धरणेन्द्र को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

ॐ ॐ **आं** आं **क्रौं** क्रौं **ह्रीं** ह्रीं **सोम** हे सोम देव! **आगच्छ-आगच्छ** आइए,आइए। **सोमाय** सोम को अर्घ्य **स्वाहा** समर्पित करता हूँ।

त्रिलोकमहिताय तीन लोक में पूजित, **दशप्रकारः** दस प्रकार के **धर्म-अम्बुवृष्टि** धर्म की जलवृष्टि से **परिषिक्तजगत्त्रयाय** जगत्त्रय को पवित्र करने वाले, **महार्घ्यगुणरत्नमहार्णवयाय** मूल्य में जो अधिक हैं-ऐसे गुणरूपी रत्नों के महासमुद्र, **नाथ!** हे नाथ! मैं **तुभ्यम्** आपको **कुसुमैः** पुष्पों के द्वारा **च** और **विशद-अक्षतैः** अखण्ड-शुभ्र अक्षतों के द्वारा **अर्घ्यं** अर्घ्य **ददामि** देता हूँ।

क्षेत्रपाल का अर्घ्य

भो क्षेत्रपाल! जिनपं प्रतिमांकपाल,
दंष्ट्राकराल जिनशासनरक्षपाल।
तैलादिजन्मगुडचन्दनपुष्पधूपै–
र्भोगं प्रतीच्छ जगदीश्वरयज्ञकाले।।

विमलसलिलधारामोदगन्धाक्षतोघैः,
प्रसवकुलनिवेद्यैर्दीपधूपैः फलौघैः।
पटहपटुतरौघैः वस्त्रसद्भूषणौघैः,
जिनपतिपदभक्त्या ब्राह्मणं प्रार्चयामि।।

ॐ आं क्रों ह्रीं विजयभद्र-वीरभद्र-मणिभद्र-भैरवापराजित-पञ्चक्षेत्रपाला इदमर्घ्यं पाद्यं गन्धं दीपं धूपं चरुं बलिं स्वस्तिकमक्षतं यज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतामिति स्वाहा।

पुष्पांजली

भो क्षेत्रपाल! हे क्षेत्रपाल! **जिनपम्** जिनेन्द्र भगवान की **प्रतिमांकपाल!** प्रतिमा से युक्त, **दंष्ट्राकराल** देखने में विकराल, **जिनशासनरक्षपाल!** जिनशासन के रक्षपाल! **तैलादिजन्मगुडचन्दनपुष्पधूपैः** तेल आदि, जल, गुड़, चन्दन, पुष्प और धूप से **जगदीश्वरयज्ञकाले** जगदीश्वर के पूजनकाल में **भोगम्** भोग को (नैवेद्य को) **प्रतीच्छ** ग्रहण करो।

जिनपतिपदभक्त्या जिनेन्द्र भगवान के चरणों की भक्ति के कारण **विमलसलिलधारामोदगन्धाक्षत–ओघैः** निर्मल जलधारा, सुगन्धित गन्ध, अक्षतों के समूह, **प्रसवकुलनिवेद्यैः** पुष्प, नैवेद्य, **दीपधूपैः** दीप, धूप से, **फलौघैः** फलों के समूह से, **पटहपटुतर–ओघैः** श्रेष्ठतम पटहों के समूह से, **वस्त्रसद्भूषण–ओघैः** वस्त्र और आभूषणों के समूह से **ब्राह्मणम्** ब्राह्मण की मैं **प्रार्चयामि** अर्चना करता हूँ।

जन्मोत्सवादि समयेषु यदीयकीर्तिं,
सेन्द्राः सुराः प्रमदभारनताः स्तुवन्ति।
तस्याग्रतो जिनपतेः परया विशुद्ध्या,
पुष्पाञ्जलिं मलयजार्द्रमुपाक्षिपेऽहम्।।

इति जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

कलशस्थापन

सत्पल्लवार्चितमुखान् कलधौतरूप्य,
ताम्रारकूटघटितान् पयसा सुपूर्णान्।
संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्,
संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकान्ते।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेशरी-महापुण्डरीकपुण्डरीकगङ्गासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्ता-सुवर्णकूलारूप्यकूलारक्तारक्तोदाक्षीराम्भोनिधिशुद्धजलं सुवर्णघटं प्रक्षालितं परिपूरित

जन्मोत्सवादि जन्मोत्सव आदि के **समयेषु** समयों में **प्रमदभारनताः** हर्ष के भार से नम्र, **सेन्द्राः** इन्द्रसहित **सुराः** देव **यदीयकीर्तिम्** जिनकी कीर्ति का **स्तुवन्ति** स्तवन करते हैं, **तस्य** उन **जिनपतेः** जिनपति के **अग्रतः** समक्ष **अहम्** मैं **परया** श्रेष्ठ **विशुद्ध्या** विशुद्धि के द्वारा **मलयज** चन्दन से **आर्द्रम्** स्निग्ध **पुष्पाञ्जलिम्** पुष्पांजली **उपाक्षिपे** क्षेपण करता हूँ।

जिनके **मुखान्** मुख **सत्पल्लव-अर्चित** उत्तम पल्लवों से अर्चित हैं, जो **कलधौतरूप्यताम्रारकूट घटितान्** सोना, चाँदी, ताम्बा, राँगा आदि से बने हुए हैं और जो **पयसा** जल से **सुपूर्णान्** भरे हुए हैं-ऐसे **चतुरः** चार **कलशान्** कलशों को **जिनवेदिकान्ते** जिनेन्द्र की वेदी के चार कोनों पर **चतुरः** चार **समुद्रान्** समुद्र को **संवाह्यताम्** धारण कर रहे के **इव** समान **गतान्** मान कर (प्राप्त होकर) मैं **संस्थापयामि** संस्थापित करता हूँ।

नवरत्नगन्धपुष्पाक्षताभ्यर्चितमामोदकं पवित्रं कुरु-कुरु झौं झौं वं मं हं सं तं पं द्रां द्रीं अ सि आ उ सा नमः स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं परम ब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तयेऽष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुण -सहितायार्हत्परमेष्ठिनेऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिम्बस्थापना

यं पाण्डुकामलशिलागतमादिदेव–
मस्नापयन् सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि।
कल्याणमीप्सुरहमक्षततोयपुष्पैः,
सम्भावयामि पुर एव तदीयबिम्बम्।।

अहम् मैं **धवल** उज्ज्वल, **मङ्गल** मंगल, **गानरवाकुले** गीतों की ध्वनि से आपूरित **जिनगृहे** जिनगृह में **उदक–चन्दन–तण्डुलपुष्पकैः** जल, चन्दन, अक्षत, पुष्पों के द्वारा तथा **चरू–सुदीप–सुधूप–फल–अर्घ्यकैः** नैवेद्य, दीपक, धूप, फल और अर्घ्य के द्वारा **जिननाथम्** जिननाथ की **यजे** पूजा करता हूँ।

पुरः –**एव** पहले ही **सुरशैलमूर्ध्नि** सुमेरुपर्वत के शिखर पर **यम्** जिस **अमल** निर्मल **पाण्डुक** पाण्डुक नामक **शिलागतम्** शिला पर स्थित, **आदिदेवम्** आदिनाथ भगवान के **अंघ्रिम्** चरणों को **सुरवराः** श्रेष्ठ देवों ने **अस्नापयन्** अभिषेक किया था, **कल्याणम्** कल्याण की **ईप्सुः** इच्छा करने वाला **अहम्** मैं **अक्षत्–तोय–पुष्पैः** अक्षत–जल–पुष्पों के द्वारा **तदीयम्** उसी **बिम्बम्** बिम्ब को **सम्भावयामि** पूजा करता हूँ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीवर्णे प्रतिमास्थापनं करोमि स्वाहा।

मुद्रिकास्वीकार

प्रत्युप्तनीलकुलिशोपलपद्मराग–
निर्यत्करप्रकरबद्धसुरेन्द्रचापम्।
जैनाभिषेकसमयेऽङ्गुलिपर्वमूले,
रत्नाङ्गुलीयकमहं विनिवेशयामि।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा नमः मुद्रिकाधारणं करोमि स्वाहा।

जैनाभिषेकसमये जिनेन्द्र भगवान के अभिषेक के काल में **अहम्** मैं **नील–कुलीश–उपल–पद्मराग** नीलमणि, हीरकमणि, पद्मरागमणि से **प्रत्युप्त** खचित और उससे **निर्यत्** निकलने वाली **करप्रकर** किरणों के समूह से **बद्ध** बँधे हुए हैं **सुरेन्द्रचापम्** इन्द्रधनुष जहाँ–ऐसी **रत्नाङ्गुलीयकम्** श्रेष्ठ अंगूठी को **अङ्गुलिपर्वमूले** अंगुली–पर्व के मूल में **विनिवेशयामि** धारण करता हूँ।

अभिषेक अत्यन्त श्रेष्ठतम क्रिया है। इस क्रिया के माध्यम से भक्त भवान्तर में उपार्जित किए गए अनन्त पापों का तत्क्षण विनाश हो जाता है। अभिषेक देवपूजा का महत्त्वपूर्ण अंग है। अभिषेक के बिना पूजा अपूर्ण मानी गई है। नित्य–नैमित्तिक पूजा का आधार अभिषेक ही है।

अभिषेक के द्रव्यों को लेकर वर्तमानयुग में बहुत ऊहापोह हो रही है। अभिषेक करने से हिंसा का दोष लगता है, अभिषेक की यह पद्धति जैनों की नहीं है, अभिषेक की प्रचलित यह विधि भट्टारकों ने चलाई अथवा भगवान का अभिषेक ही नहीं होता–इस प्रकार के कतिपय तर्कों का आश्रय लेकर अभिषेक की विधि का विरोध किया जा रहा है।

निराधार तर्क आत्मा का पतन करने में निमित्त बनते हैं। मूल आगम का स्वाध्याय करके अपनी मान्यताओं का परिष्करण करना ही आत्मा के उद्धार का साधन है। अतः आग्रह का परित्याग करके आगम में वर्णित विधि को यथावत् अपनाना चाहिए।

जिनाभिषेकः

जलाभिषेक

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटि–
संलग्नरत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रिम्।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टै–
र्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिञ्चे।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ह्वीं ह्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पवित्रतरजलेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

अभिषेक

दूर-अवनम्र दूर तक झूके हुए **सुरनाथकिरीटकोटिसंलग्न** इन्द्रों के मुकुटों के अग्रभाग में लगे हुए **रत्नकिरणच्छविधूसर** रत्नकिरणों की छवि से धूसरित हो रहे हैं, जो **प्रस्वेदतापमलमुक्तम् अपि** प्रस्वेद, ताप और मल से भी मुक्त है, मैं उन **जिन-पतिम्** जिनपति का **भक्त्या** भक्तिपूर्वक **प्रकृष्टैः** उत्कृष्ट **जलैः** जल से **बहुधा** अनेक बार **अभिषिञ्चे** अभिषेक करता हूँ/करती हूँ।

ॐ ह्रीं जलाभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शर्करारसाभिषेक

मुक्त्यङ्गनानर्मविकीर्यमाणैः,
पिष्टार्थकर्पूररजोविलासैः।
माधुर्यधुर्यैर्वरशर्करौघै–
र्भक्त्या जिनस्य स्नपनं करोमि।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ध्वीं ध्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते शर्करारसेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं शर्कराभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक्षुरसाभिषेक

भक्त्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चैः,
हस्तैश्च्युता सुरवरासुरमर्त्यनाथैः।

मुक्त्यङ्गनानर्मविकीर्यमानैः मुक्तिरूपी स्त्री के द्वारा मन्द हास्य को बिखराने वाला है और **पिष्टार्थकर्पूररजोविलासैः** चूर्ण किए गए सारभूत कपूर की धूलि के विलासरूप है तथा **माधुर्यधुर्यैः** मधुरता में प्रधान है–ऐसी **वरशर्करौघैः** श्रेष्ठ शर्करा के समूह द्वारा मैं **भक्त्या** भक्तिपूर्वक **जिनस्य** जिनेन्द्र भगवान का **स्नपनम्** अभिषेक **करोमि** करता हूँ/करती हूँ।

तत्कालपीलितमहेक्षुरसस्य धारा,
सद्यः पुनातु जिनबिम्बगतैव युष्मान्।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ह्वीं ह्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते इक्षुरसेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं इक्षुरसाभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नारिकेलरसाभिषेक

नारिकेलजलैः स्वच्छैः, शीतैः पूतैर्मनोहरैः।
स्नानक्रियां कृतार्थस्य, विदधे विश्वदर्शिनः।।

जिन्होंने अपने **हस्तैः** हाथ **उच्चैः** उठा कर **ललाटतटदेशनिवेशित** ललाट तट के निकट रखे हुए हैं–ऐसे **सुरवरासुरमर्त्यनाथैः** सुरेन्द्रों–असुरेन्द्रों एवं मनुष्येन्द्रों के द्वारा **च्युता** छोड़ी गई **जिनबिम्बगता–एव** जिनबिम्ब पर जाने ही जाने वाली **तत्काल** तत्काल **पीलित** पेल कर निकाली गई **इक्षुरस्य** इक्षुरस की **महा** महा **धारा** धारा **युष्मान्** आपको **सद्य** आज **पुनातु** पवित्र करें।

स्वच्छैः स्वच्छ, **शीतैः** शीतल, **पूतैः** पवित्र, **मनोहरैः** मन का हरण करने वाले, **नारिकेलजलैः** नारियल के जल से मैं **कृतार्थस्य** कृतकृत्य और **विश्वदर्शिनः** विश्वदर्शी की **स्नानक्रियाम्** स्नानक्रिया **विदधे** करता हूँ/करती हूँ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ध्वीं ध्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते नारिकेलरसेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं नारिकेलाभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्ररसाभिषेक

सुपक्वैः कनकच्छायैः, सामोदैर्मोदकारिभिः।
सहकाररसैः स्नानं, कुर्मः शर्मैकसद्मनः।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ध्वीं ध्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते आम्ररसेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।

सुपक्वैः भली-भाँति पके हुए, **कनकच्छायैः** सुवर्ण के समान कान्ति के धारक, **सामोदैः** सुगन्धि से युक्त तथा **मोदकारिभिः** आनन्द देने वाने **शर्म-एकसद्मनः** सुख के एकमात्र आलयस्वरूप जिनेन्द्र भगवान का मैं **सहकाररसैः** आम्र के रस से **स्नानम्** अभिषेक **कुर्मः** करता हूँ/करती हूँ।

धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं आम्ररसाभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृताभिषेक

उत्कृष्टवर्णनवहेम–रसाभिराम–
देहप्रभावलयसङ्गमलुप्तदीप्तिम्।
धारां घृतस्य शुभगन्धगुणानुमेयां,
वन्देऽर्हतां सुरभि संस्नपनोपयुक्ताम्।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ह्वीं ह्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते घृतेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं घृताभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिराम उत्कृष्ट वर्णवाले नवीन हेमरस (पीला) के समान मनोहर **देहप्रभावलयसङ्गम** शरीर के प्रभावलय के सम्पर्क के कारण **लुप्तदीप्तिम्** लुप्त हो चुकी है दीप्ति जिसकी तथा **शुभगन्धगुण-अनुमेयाम्** शुभ गन्धरूप गुण के द्वारा अनुमेय है-ऐसी **अर्हताम्** अर्हत्परमेष्ठी के **संस्नपनोपयुक्ताम्** अभिषेक के योग्य **सुरभि** सुगन्धित **धृतस्य** घी की **धाराम्** धारा को मैं **वन्दे** नमस्कार करता हूँ/करती हूँ।

दुग्धाभिषेक

सम्पूर्ण शारदशशाङ्कमरीचिजाल–
स्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः।
क्षीरैर्जिनाः शुचितरैरभिषिञ्च्यमानाः,
सम्पादयन्तु मम चित्तसमीहितानि।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ह्वीं ह्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते दुग्धेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं दुग्धाभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दध्यभिषेक

दुग्धाब्धिवीचिपयसञ्चितफेनराशि–
पाण्डुत्वकान्तिमवधीरयतामतीव।

यह **सम्पूर्णशारदशशाङ्क-मरीचिजाल** शरत्कालीन पूर्णिमा के चन्द्रमा की किरणों के समूह का **स्यन्दैः** झरने के **इव** समान अथवा **आत्मयशसाम्** अपने यश के **सुप्रवाहैः** प्रवाह के **इव** समान-ऐसे **शुचितरैः** पवित्रतम **क्षीरैः** विविध प्रकार के दूध से **अभिषिच्यमानाः** अभिषिक्त हुए जिनेन्द्र भगवान **मम** मेरे **चित्तसमिहितानि** मन की इच्छाओं को **सम्पादयन्तु** सम्पादित करें।

दुग्धाब्धिवीचिपयसञ्चित क्षीरसमुद्र की जलतरंगों से संचित हुई **फेनराशि** फेनराशि की **पाण्डुत्वकान्तिम्** शुक्लकान्ति को **अवधीरयताम्** पराजित किए

दध्नां गता जिनपतेः प्रतिमां सुधारा,
सम्पद्यतां सपदि वाञ्छितसिद्धये वः।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ह्वीं ह्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते दध्ना जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं दध्यभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वौषधि-अभिषेक

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः,
सर्वाभिरौषधिभिरर्हत उज्ज्वलाभिः।
उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेला–
कालेयकुंकुमरसोत्कटवारिपूरैः।।

हुए के **इव** समान **जिनपतेः** जिनपति की **प्रतिमाम्** प्रतिमा पर **गता** छोड़ी गई **दध्नाम् सुधारा** समीचीन धारा **वः** हमारी **वाञ्छितसिद्धये** इष्ट सिद्धि को **सपदि** तत्काल **सम्पद्यताम्** सम्पादित करें।

घृत–दुग्ध–दधि–इक्षुवाहैः घी, दुध, दहि, इक्षु के प्रवाह से **संस्नापितस्य** संस्नापित तथा **उद्वर्तितस्य** उबटन से पूजित **अर्हतः** अरिहन्त का **उज्ज्वलाभिः** उज्ज्वल, **सर्वाभिः** सम्पूर्ण **औषधिभिः** औषधिस्वरूप **एला–कालेय–कुङ्कुमरस–उत्कृष्ट** इलायची, चन्दन और कुंकुम के उत्कृष्ट रस से मिश्रित **वारिपुरैः** जल से मैं **अभिषेकम्** अभिषेक **विदधामि** करता हूँ/करती हूँ।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ध्वीं ध्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते सर्वौषध्या जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं सर्वौषध्यभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुःकोणकलशाभिषेक

इष्टैर्मनोरथशतैरिव भव्यपुंसां,
पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिलावसानैः।
संसारसागरविलङ्घनहेतुसेतु–
माप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेन्द्रम्।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ध्वीं ध्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते चतुःकोणकलशेभ्यो जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

भव्यपुंसाम् भव्य जीवों के **शतैः** सैंकड़ों **इष्टैः** इष्ट **मनोरथैः** मनोरथों के **इव** समान **निखिल** समस्त **पूर्णैः** परिपूर्ण **सुवर्णकलशैः** सुवर्ण कलशों से **संसारसागरविलङ्घनहेतुसेतुम्** संसाररूपी सागर को लाँघने के लिए सेतुस्वरूप तथा **त्रिभुवन–एकपतिम्** तीनभुवन के एकमात्र नाथ **जिनेन्द्रम्** जिनेन्द्र का मैं **अवसानैः** अन्त में **आप्लावये** आप्लावत(अभिषेक) करता हूँ/करती हूँ।

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै,
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं चतुःकोणकलशाभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दनानुलेपन

संशुद्धशुद्ध्या परया विशुद्ध्या,
कर्पूरसम्मिश्रितचन्दनेन।
जिनेन्द्रदेहोपरिकुंकुमेन,
विलेपनं चारु करोमि भक्त्या।।

इति चन्दनानुलेपनं करोमीति स्वाहा।

पुष्पवृष्टि

यस्य द्वादशयोजने सदसि सद्गन्धादिभिः स्वोपमा–
नप्यर्थान्सुमनोगणान्सुमनसा वर्षन्ति विश्वक् सदा।
यः सिद्धिं सुमनः सुखं सुमनसां स्वं ध्यायतामावह–
त्तं देवं सुमनोमुखैश्च सुमनोभेदैः समभ्यर्चये।।

ॐ ह्रीं सुमनः सुखप्रदाय पुष्पवृष्टिं करोमीति स्वाहा।

संशुद्धशुद्ध्या अत्यन्त शुद्धि से युक्त, **परया** परम **विशुद्धया** विशुद्धि से युक्त, **कर्पूरसम्मिश्रितचन्दनेन** कर्पूर से मिश्रित चन्दन से मैं **देव–असुरपूजितस्य** देव और असुरों द्वारा पूजित **जिनस्य** जिनेन्द्र का **भक्त्या** भक्तिपूर्वक **चारु** सुन्दर **विलेपनम्** विलेपन **करोमि** करता हूँ/करती हूँ।

यस्य जिनकी **द्वादशयोजने** बारह योजन वाली **सदसि** सभा में **सद्गन्धादिभिः** उत्तम गन्ध आदि की अपेक्षा **स्व–उपमान्** अपनी साक्षात् उपमा वाले होकर

मंगल आरती

दध्युज्ज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपैः,
पात्रार्पितं प्रतिदिनं महतादरेण।
त्रैलोक्यमङ्गलसुखालयकामदाह–
मारार्तिकं तव विभोरवतारयामि।।

इति मङ्गलारती-अवतरणं करोमीति स्वाहा।

पूर्णसुगन्धित-कलशाभिषेक

द्रव्यैरनल्पघनसारचतुःसमाढ्यै–
रामोदवासित समस्त दिगन्तरालैः।
मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुङ्गवानां,

अपि भी **अर्थान्** यथार्थ **सुमनोगणान्** पुष्पसमूह को **सुमनसः** देवगण **विश्वक्** सभी ओर से **सदा** सर्व काल **वर्षन्ति** बरसाते हैं, **यः** जो **स्वम्** अपना **ध्यायताम्** ध्यान करने वाले **सुमनसाम्** सुन्दर मन वाले (सम्यग्दृष्टियों के लिए) **सिद्धिम्** सिद्धि और **सुमनसुखम्** देवों के सुख का **आवहत्** आह्वान करने वाले हैं। **तम्** उन **देवम्** देव की मैं **सुमनोमुखैः** सुन्दर मन और मुखों (उच्चारण) के साथ **च** और **सुमनोभेदैः** विविध सुमनों के द्वारा **समभ्यर्च्ययें** भली–भाँति अर्चना करता हूँ।।

विभो! हे नाथ! मैं **तव** आपकी **पात्र–अर्पितम्** पात्र में रखे हुए **दधि–उज्ज्वल–अक्षत–मनोहर पुष्प–दीपैः** दहि, उज्वल, अक्षत, मनोहर पुष्प और दीप से सुसज्जित, **त्रैलोक्यमङ्गल** तीन लोक में मंगल स्वरूप, **सुख–आलय** सुख के आलयस्वरूप तथा **कामदाह** काम का दाह करने वाली यह **आरार्तिकम्** आरती **अवतारयामि** उतारता हूँ/उतारती हूँ।

आमोदवासित–समस्तदिगन्तरालैः जिनके आमोद के कारण समस्त दिशाओं के अन्तराल सुवासित हो रहे हैं–ऐसे **घनसार** कपूरादि **चतुः** चार **अनल्प** बहुत **द्रव्यैः** द्रव्यों से **समाढ्यैः** सुसंस्कारित **मिश्रीकृतेन** मिश्रित किए गए **पयसा** जल

त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं झं झं ह्वीं ह्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पूर्णकलशेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

अर्घ्य

उदकचन्दनतण्डुलपुष्पकै–
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं पूर्णकलशाभिषेकावसरे श्री जिनदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। इति लघुस्नपनम् ।।

से **जिनपुङ्गवानाम्** जिनेन्द्र देव का **त्रैलोक्यपावनम्** तीन लोक को पावन करने वाला यह **स्नपनम्** अभिषेक **अहम्** मैं **करोमि** करता हूँ/करती हूँ।

।। इस प्रकार लघुस्नपन पूर्ण हुआ ।।

अभिषेक में प्रयुक्त होने वाले द्रव्यों को जीवहिंसा का कारण बताना–आगम का अवर्णवाद करना है।

पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पति –कायिक के भेद से एकेन्द्रिय जीव पाँच प्रकार के हैं।

इक्षुरसकायिक, घृतकायिक, दुग्धकायिक, दधिकायिक आदि जीव न कहीं आगम में लिखे हैं और न कहीं वर्णित हैं।

यहाँ कोई यह कह सकता है कि उनमें भले ही जीव नहीं हो, किन्तु उनके कारण से अनेक जीवों का घात तो हो ही सकता है। विवेक से रहित होकर क्रिया करने पर यह सम्भावना तो किसी भी द्रव्य के साथ हो सकती है। जल के कारण भी चिंटी आदि जीवों का विघात हो सकता है। अतः विवेकपूर्ण क्रिया करनी चाहिए।

शान्तिधारा

ॐ नमः सिद्धेभ्यः। ॐ नमः सिद्धेभ्यः। ॐ नमः सिद्धेभ्यः। श्री वीतरागाय नमः। ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत् पार्श्वतीर्थङ्कराय द्वादशगणपरिवेष्टिताय शुक्लध्यानपवित्राय सर्वज्ञाय स्वयम्भुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्यमहीव्याप्ताय अनन्तसंसारचक्रपरिमर्दनाय अनन्त-दर्शनाय अनन्तज्ञानाय अनन्तवीर्याय अनन्तसुखाय सिद्धाय बुद्धाय त्रैलोक्य-वशङ्कराय सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे धरणेन्द्रफणामण्डलमण्डिताय ऋष्यार्यिका-श्रावक-श्राविकाप्रमुख-चतुस्सङ्घोपसर्गविनाशनाय घातिकर्मविनाशनाय अघातिकर्मविनाशनाय

(निम्नांकित प्रत्येक शब्द के बाद छिन्दि-छिन्दि, भिन्दि-भिन्दि बोलना चाहिए।)

अपवायम्। मृत्युम्। अतिकामम्। रतिकामम्। क्रोधम्। अग्निम्। सर्वशत्रुम्। सर्वोपसर्गम्। सर्वविघ्नम्। सर्वभयम्। सर्वराजभयम्। सर्वचौरभयम्। सर्वदुष्टभयम्। सर्वमृगभयम्। सर्वमात्मचक्रभयम्। सर्वपरमन्त्रम्। सर्वशूलरोगम्। सर्वक्षयरोगम्। सर्वकुष्ठरोगम्। सर्वक्रूररोगम्। सर्वनरमारीम्। सर्वगजमारीम्। सर्वाश्वमारीम्। सर्वगोमारीम्। सर्वमहिषमारीम्। सर्वधान्यमारीम्। सर्ववृक्षमारीम्। सर्वगलमारीम्। सर्वपत्रमारीम्। सर्वपुष्पमारीम्। सर्वफलमारीम्। सर्वराष्ट्रमारीम्। सर्वदेशमारीम्। सर्वविषमारीम्। सर्ववेतालशाकिनीभयम्। सर्ववेदनीयम्। सर्वमोहनीयम्। सर्वकर्माष्टकम्।

(निम्नांकित प्रत्येक शब्द के बाद कुरु-कुरु बोलना चाहिए।)

ॐ सुदर्शनमहाराज चक्रविक्रमतेजोबलशौर्यवीर्यशान्तिम्। सर्वजना-नन्दनम्। सर्वभव्यानन्दनम्। सर्वगोकुलानन्दनम्। सर्वग्रामनगरखेटकर्वट-मटम्बपत्तनद्रोणमुखसंवाहानन्दनम्। सर्वलोकानन्दनम्। सर्व देशानन्दनम्। सर्व यजमानानन्दनम्।

सर्व दुःखं हन-हन, दह-दह, पच-पच, कुट-कुट, शीघ्रं-शीघ्रम्।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधिव्यसनवर्जितम्।
अभयं क्षेममारोग्यं, स्वस्तिरस्तु विधीयते।।

शिवमस्तु। कुलगोत्रधनधान्यं सदास्तु।

चन्द्रप्रभवासुपूज्यमल्लिवर्द्धमानपुष्पदन्तशीतलमुनिसुव्रतनेमिनाथपार्श्वनाथ इत्येभ्यो नमो नमः। इत्यनेन मन्त्रेण नवग्रहशान्त्यर्थं गन्धोदकधारावर्षणम्।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः,
करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः।।
इति शान्तिमन्त्रम्।

लघुशान्तिधारा

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वपापप्रणाशनाय सर्वविघ्न-विनाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृत-क्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वक्षामरडामर-विनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा **(परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** ---नामधेयस्य सर्वशान्तिं कुरु-कुरु तुष्टिं कुरु-कुरु पुष्टिं कुरु-कुरु वषट् स्वाहा।

मध्यम शान्तिधारा

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं तं पं पं झं झं इ्वीं इ्वीं क्ष्रीं क्ष्रीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ॐ ह्रीं क्रौं मम पापं खण्डय-खण्डय हन-हन दह-दह पाचय-पाचय शीघ्रं-शीघ्रं कुरु-कुरु।

ॐ नमोऽर्हं झं इ्वीं क्ष्वीं हं सं झं वं ह्वः पः हः क्षां क्षीं क्षुं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षः। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रुँ ह्रूँ ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः **(परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** मम पूजकस्य ऋद्धिं वृद्धिं कुरु-कुरु स्वाहा।

ॐ द्रां द्रां द्रावय-द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः **(परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** मम पूजकस्य श्रीरस्तु, वृद्धिरस्तु, पुष्टिरस्तु, शान्तिरस्तु, कान्तिरस्तु, कल्याणमस्तु मम कार्यसिद्ध्यर्थं सर्वविघ्ननिवारणार्थं श्रीमद् भगवते सर्वोत्कृष्ट त्रैलोक्य-नाथार्चितपादपद्मप्रसादात् सद्धर्मश्रीबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु, स्वस्तिरस्तु, धनधान्यसमृद्धिरस्तु, श्रीशान्तिनाथो मां प्रति प्रसीदतु, श्री वीतरागदेवो मां प्रति प्रसीदतु, श्री जिनेन्द्र परममाङ्गल्यनामधेयो ममेहामुत्रं च सिद्धिं तनोतु।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीचिन्तामणिपार्श्वतीर्थङ्कराय रत्नत्रयरूपाय अनन्तचतुष्टयसहिताय धरणेन्द्रफणमण्डलमण्डिताय समवसरणलक्ष्मीशोभि-ताय इन्द्रधरणेन्द्रचक्रवर्त्यादिपूजितपादपद्माय केवलज्ञानलक्ष्मीशोभिताय जिनराजमहादेवाय अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद् गुणसंयुक्ताय परमगुरु -परमात्मने सिद्धाय बुद्धाय त्रैलोक्यपरमेश्वराय देवाय सर्वसत्वहितङ्कराय धर्मचक्राधीश्वराय सर्वविद्यापरमेश्वराय त्रैलोक्यमोहनाय धरणेन्द्रपद्मावती-सहिताय अतुलबलवीर्यपराक्रमाय अनेकदैत्यदानवकोटिमुकुटघृष्टपादपीठाय ब्रह्माविष्णुरुद्रनारदखेचरपूजिताय सर्वभव्यजनानन्दकराय सर्वरोगघोरोपसर्ग-विनाशाय सर्वदेशग्रामपुरपट्टनराजाप्रजाशान्तिकराय सर्वजीवविघ्न-निवारणसमर्थाय श्रीपार्श्वदेवाधिदेवाय नमोऽस्तु।

श्रीजिनराज पूजनप्रसादात्सर्वसेवकानाम् सर्वदोषरोगशोकभयपीडाविनाशनं कुरु-कुरु, सर्वशान्तिं तुष्टिं पुष्टिं कुरु-कुरु स्वाहा। ॐ नमो श्रीशान्तिदेवाय सर्वारिष्टशान्तिकराय ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा मम सर्वविघ्नशान्तिं कुरु-कुरु स्वाहा। मम तुष्टिं पुष्टिं कुरु-कुरु स्वाहा।

श्रीपार्श्वनाथ पूजनप्रसादाद् मम

(प्रत्येक शब्द के बाद छिन्दि-छिन्दि, भिन्दि-भिन्दि बोलना चाहिए।)

अशुभानि पापानि। मम परदुष्टजनोपकृत मन्त्र-तन्त्र-दृष्टि-मुष्टि-छलछिद्रदोषान्। मम अग्निचोरजलसर्पव्याधिम्। मारीकृतोद्रवान्। सर्व भैरव-देव-दानव-वीर-नर-नरसिंह-योगिनीकृतविघ्नान्। डाकिनी-शाकिनी-भूत-भैरवादिकृतविघ्नान्। भवनवासी-व्यन्तर-ज्योतिषीदेवदेवीकृतविघ्नान्। अग्निकृतविघ्नान्। उदधिकुमार-स्तनितकुमारकृतविघ्नान्। द्वीपकुमार-दिक्कुमारकृतविघ्नान्। वातकुमार-मेघकुमारकृतविघ्नान्। इन्द्रादि दशदिक्पालदेवकृतविघ्नान्। जय-विजय-अपराजित-मणिभद्र-पूर्णभद्रादि क्षेत्रपालकृतविघ्नान्। राक्षस-वैताल-दैत्य-दानव-यक्षादिकृतविघ्नान्। नव-ग्रहकृतविघ्नान्। सर्वग्रामनगरीपीडाविघ्नान्। सर्व अष्टकुलीनागजनित-विषभयान्।

ॐ भगवती श्रीचक्रेश्वरी ज्वालामालिनीपद्मावतीदेवी! अस्मिन् जिनेन्द्रभवने आगच्छ-आगच्छ एहि-एहि तिष्ठ तिष्ठ बलिं गृहाण-गृहाण मम धनधान्य समृद्धिं कुरु-कुरु स्वाहा।

ॐ आं क्रौं ह्रीं श्री वृषभादिवर्द्धमानान्तचतुर्विंशतितीर्थङ्करमहादेवाः प्रीयन्तां-प्रीयन्ताम्। मम पापानि शाम्यन्तु, घोरोपसर्गादिसर्वविघ्नानि शाम्यन्तु।

ॐ आं क्रौं ह्रीं चक्रेश्वरीज्वालामालिनीपद्मावतीदेवी! प्रीयन्तां-प्रीयन्ताम्।

ॐ आं क्रौं ह्रीं श्रीरोहिण्यादिमहादेवी! अत्र आगच्छ-आगच्छ सर्वदेवता प्रीयन्तां-प्रीयन्ताम्।

ॐ आं क्रौं ह्रीं श्रीमणिभद्रादि यक्षकुमारदेवाः! प्रीयन्तां-प्रीयन्ताम्। सर्वे जिनशासकरक्षकदेवाः! प्रीयन्तां-प्रीयन्ताम्। श्रीआदित्य-सोम-मङ्गल-बुध-बृहस्पति-शुक्र-शनि-राहु-केतु-सर्वेनवग्रहाः! प्रीयन्तां-प्रीयन्तां प्रसीदन्तु।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,

यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः,
करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः।।
यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधिव्यसनवर्जितम्।
अभयं क्षेममारोग्यं, स्वस्तिरस्तु विधीयते।।
यस्यार्थं क्रियते कर्म, सम्प्रीतो नित्यमस्तु मे।
शान्तिकं पौष्टिकं चैव, सर्वकार्येषु सिद्धिदः।।
आह्वाननं नैव जानामि, नैव जानामि पूजनम्।
विसर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वरः।।

इति शान्तिधारा।

परमोपदेश

आगम समुद्र के समान अथाह है और हमारी बुद्धि हथेली के समान अतितुच्छ है। जिस प्रकार समुद्र का पानी हथेली में समा नहीं सकता, उसी प्रकार जिनागम हमारी अल्प बुद्धि में समा नहीं सकता। अतः बुद्धि के आधार पर आगम का परिशीलन नहीं किया जाना चाहिए। पापभीरु, पूर्वाचार्यों न अपनी क्षमता के अनुसार प्राप्त जिनवचनों को शब्दांकित कर ग्रन्थ में लिपिबद्ध किया है। जिनवाणी माता है। अतः उसका अक्षर-अक्षर सत्य है।

अनादिकाल से संसार में परिभ्रमण करते हुए अज्ञानरूपी तिमिर से आच्छन्न हुए हमारे विवेकचक्षु को अनेक बातें सुझती नहीं है। फलतः मन उसे मानने को तैयार नहीं हो पाता। मन को मनमानी से बचाने के लिए जिनवाणी की शरण लेने वाला भव्यात्मा मन की कैसे मान सकता है? अतः तर्कों के मायाजाल को छोड़ कर आगम पर दृढ़ श्रद्धान करना चाहिए। इसी से रत्नत्रय की सुरक्षा हो सकती है।

अंकलीकर-परम्परा का चतुर्थ-पट्टाधीश
आचार्य सुविधिसागर

महाशान्तिधारा

ॐ नमः सिद्धेभ्यः।

ॐ णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं,
णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं,
णमो लोए सव्व साहूणं।

चत्तारि मंगलं अरिहंत मंगलं सिद्धा मंगलं साहू मंगलं केवली पण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा अरहंता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरहंते सरणं पव्वज्जामि सिद्धे सरणं पव्वज्जामि साहू सरणं पव्वज्जामि केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

ॐ ह्रीं अनादिसिद्ध-महामन्त्रपूजनभक्तिप्रसादात्सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वशान्तिर्भवतु स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं इवीं इवीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय-द्रावय नमोऽर्हते भगवते स्वाहा।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतयेऽष्टगुणसमृद्धाय फट् स्वाहा।

(छन्द = शार्दूलविक्रीडित छन्द)

श्रीखण्डोद्भवकर्दमैः सुरुचिरैः कर्पूरचूर्णैर्मितैः,
सम्मिश्रैरतिगन्धिभिः नदनदि-कासारकूपादिभिः।
पाथोभिः परिपूरितेन कलशैः नान्तस्थितैर्नात्मनां,
शान्त्यर्थं महाशान्तिमन्त्रपठनैर्देवं जिनं स्नापये।।

गद्य

ॐ कर्पूरकाश्मीरागुरुमलयजादिक्षोदव्यामिश्रैर्निर्णिक्तस्वर्णरेणुयमान-कञ्जकिञ्जल्कपुञ्जपिञ्जरितैर्विजितविलसद्विलासिनीविलोललोचन-नीलनीरजजलपरिपूरितैः परिपूरितसकलजगद्-घ्राणविवरबन्धुरसौगन्ध्यैः।

(वसन्ततिलका छन्द)

अन्धीकृतालिभिरभिष्टुतहेमकुम्भ–
सन्धारितैर्विजितदिक्द्वीपदानगन्धैः।
बन्धुप्रभुं भवभृतां हतघातिबन्धं–
गन्धोदकैर्जिनपतिं स्नपयामि शान्त्यै।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं पं पं झं झं इ्वीं इ्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय–द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ॐ ह्रीं क्रों **(परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** ---नामधेयस्य पापं खण्ड–खण्ड हन–हन दह–दह पच–पच पाचय–पाचय कुट–कुट शीघ्रं–शीघ्रं अर्हं झं इ्वीं क्ष्वीं हं सं झं वं ह्रः पः हः क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्षीं हां ह्रीं हूं हें हैं हों हौं हः ह्रीं द्रां द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठ ठ ठ ठ **((परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मति-सागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** ---नामधेयस्य

(प्रत्येक शब्द के बाद तथास्तु बोलना चाहिए।)

श्रीरस्तु, सिद्धिरस्तु, वृद्धिरस्तु, तुष्टिरस्तु, पुष्टिरस्तु, शान्तिरस्तु, कान्तिरस्तु, कल्याणमस्तु स्वाहा। मनः समाधिरस्तु। दीर्घायुरस्तु।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीं नमोऽर्हतेऽनन्तचतुष्टयप्रभवाय मोक्षलक्ष्मीवशङ्कराय नमः स्वाहा।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमलनिवासिनि! पापात्मक्षयङ्करि! श्रुतज्ञानज्वालासहस्र–प्रज्वलिते सरस्वति! तव भक्तिप्रसादान्मम पापविनाशनं भवतु क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः क्षीरवरधवलेऽमृतसम्भवे वं वं हूं हूं स्वाहा।

सरस्वतिभक्तिप्रसादात्सुज्ञानं भवतु।

ॐ णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं भूयलोयाणं भूयालं जए वा विवादे वा थंभणे वा रणंगणे वा रायंगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख–रक्ख स्वाहा।

अनेन वर्द्धमानमन्त्रेण सर्वरक्षा भवतु।

ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः नमोऽर्हते सर्व रक्ष-रक्ष हूं फट् स्वाहा। सर्वरक्षा भवतु।

ॐ उसहाइजिण पणमामि। सया अमलो विमलो विरजो वरया कप्पतरु सव्वकामदुहा मम रक्ख सहापुरु विज्जणिही। ॐ अट्ठेवय अट्ठसया अट्ठसहस्सायं अट्ठलक्ख अट्ठकोडिओ रक्खं तुम्मं सरीरं देवासुर पणमिया सिद्धा।

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं नमः स्वाहा स्वधा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः एतन्मन्त्रप्रसादात्सर्वभूतव्यन्तरादिबाधाविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महालक्ष्म्यै नमः।

ॐ नमोऽर्हते सर्वं रक्ष हूं फट् स्वाहा।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्वदिशागतविघ्नविनाशनं भवतु।

ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः सर्वविदिशागतविघ्नविनाशनं भवतु।

ॐ निखिलभुवनभवनमङ्गलभूत-जिनपतिस्नपनसमयसम्प्राप्तावसरमभि-नवकर्पूरकालागुरु-कुंकुमहरिचन्दनाद्यनेकसुगन्धिबन्धुरगन्धद्रव्यसम्भार-सम्बन्धबन्धुरमखिलदिगन्तरालव्याप्तसौरभातिशयसमाकृष्टसमदसामज-कपोलतलविगलितमदमुदितमधुकरनिकरमर्हत्परमेश्वरपवित्रतरगात्रस्पर्शन -मात्रपवित्रीभूतं भगवदिदं गन्धोदकधारावर्षममेषहर्षनिबन्धनं भवतु **(परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** ---नामधेयस्य

(प्रत्येक शब्द के साथ तथास्तु बोलना चाहिए।)

शान्तिं करोतु। कान्तिमाविष्करोतु। कल्याणं प्रादुष्करोतु। सौभाग्यं सन्तनोतु। आरोग्यमातनोतु। सम्पदः सम्पादयतु। विपदमवसादयतु। यशो विकासयतु। मनः प्रसादयतु। आयुर्दीर्घयतु। श्रियं श्लाघयतु। शुद्धिं विशुद्धयतु। बुद्धिं विवर्धयतु। श्रेयः पुष्णातु। प्रत्यवायं मुष्णातु। अनभिमतं निवारयतु। मनोरथं परिपूरयतु।

परमोत्सवकारणमिदं, परम मङ्गलमिदं, परम पावनमिदं स्वस्त्यस्तु नः, स्वस्त्यस्तु वः इवीं क्ष्वीं हं सः अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं पुष्टिं च कुरु-कुरु स्वाहा।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते त्रैलोक्यनाथाय, घातिकर्मविनाशनाय, अष्ट-महाप्रातिहार्यसहिताय, चतुस्त्रिंशदतिशयसमेताय, अनन्तदर्शनज्ञानवीर्यसुखा-त्मकाय, अष्टादशदोषरहिताय, पञ्चमहाकल्याणसम्पूर्णाय, नवकेवललब्धि-समन्विताय, दशविशेषणसंयुक्ताय, देवाधिदेवाय, धर्मचक्राधीश्वराय, धर्मोपदेशनकराय, चमरवैरोचनाच्युतेन्द्रप्रभृतीन्द्रशतेन मेरुगिरिशिखरशेखरी-भूतपाण्डुकशिलातलेन, गन्धोदकपरिपूरितानेकविचित्रमणिमयमङ्गलकलशै-रभिषिक्तमिदानीमर्हं त्रैलोक्येश्वरमर्हत्परमेष्ठिनमभिषेचयामि हं झं इवीं क्ष्वीं हं सः द्रां द्रीं ऐं अर्हं ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं द्रावय-द्रावय अ सि आ उ सा सर्वशान्तिं कुरु-कुरु स्वाहा।

(क्रमशः आठ द्रव्यों से पूजन करनी चाहिए।)

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तेभ्योऽत्रावतरावतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तेभ्योऽत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तेभ्योऽत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

ॐ ह्रीं शीतोदकप्रदानेन शीतलो भगवान् प्रसीदतु शीता आपः पान्तु शिवमाङ्गल्यन्तु श्रीमदस्तु वः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं गन्धोदकप्रदानेन अभिनन्दनो भगवान् प्रसीदतु गन्धाः पान्तु शिवमाङ्गल्यन्तु श्रीमदस्तु वः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं अक्षतोदकप्रदानेन अनन्तो भगवान् प्रसीदतु अक्षताः पान्तु शिवमाङ्गल्यन्तु श्रीमदस्तु वः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं पुष्पोदकप्रदानेन पुष्पदन्तो भगवान् प्रसीदतु पुष्पाणि पान्तु शिवमाङ्गल्यन्तु श्रीमदस्तु वः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं नैवेद्यप्रदानेन नेमिनाथो भगवान् प्रसीदतु पीयूषपिण्डाः पान्तु शिवमाङ्गल्यन्तु श्रीमदस्तु वः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं दीपप्रदानेन चन्द्रप्रभो भगवान् प्रसीदतु कर्पूरमाणिक्य दीपाः पान्तु शिवमाङ्गल्यन्तु श्रीमदस्तु वः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं धूपप्रदानेन धर्मनाथो भगवान् प्रसीदतु गुग्गुलादिदशाङ्गधूपाः पान्तु शिवमाङ्गल्यन्तु श्रीमदस्तु वः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ ह्रीं फलप्रदानेन पार्श्वनाथो भगवान् प्रसीदतु क्रमुकनारिङ्गप्रभृतिफलानि पान्तु शिवमाङ्गल्यन्तु श्रीमदस्तु वः फलं निर्वपामिति स्वाहा।

(क्रमशः पाँच अर्घ्य चढ़ाने चाहिए।)

ॐ अर्हन्तः पान्तु वः सद्धर्मश्रीबलायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु वः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ सिद्धाः पान्तु वः हृदयं निर्वाणं प्रयच्छन्तु वः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ आचार्याः पान्तु वः शीतलसौगन्ध्यमस्तु वः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ उपाध्यायाः पान्तु वः सौमनस्यं चास्तु वः अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

ॐ सर्वसाधवः पान्तु वः अन्नदानतपोवीर्यविज्ञानमस्तु वः अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकै-
श्चरुसुदीपसुधूपफलार्घ्यकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले,
जिनगृहे जिननाथमहं यजे।

ॐ ह्रीं श्री पञ्चपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ॐ सम्प्रतिकाल-श्रेयस्कर-स्वर्गावतरण-जन्माभिषेक-परिनिष्क्रमण-केवलज्ञान-निर्वाणकल्याणविभूषितमहाभ्युदयाः।

(अब क्रम से तीर्थंकरों की जयकार करके पुष्प चढ़ाने चाहिए।)

ॐ वृषभस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादादष्टविधकर्मविनाशनमस्तु वः।

(आदिनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्रीमदजितस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादादजेयशक्तिर्भवतु वः।

(अजितनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री सम्भवस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादादनेकगुणगणाश्चास्तु वः।

(सम्भवनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री अभिनन्दनस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादादभिमतफलं पवित्रं प्रयच्छन्तु वः।

(अभिनन्दननाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री सुमतिस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादादमृतं पवित्रं प्रयच्छन्तु वः।

(सुमतिनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री पद्मप्रभस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादाद् दयां प्रयच्छन्तु वः।

(पद्मप्रभ भगवान की जय।)

ॐ श्री सुपार्श्वस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात्कर्मक्षयाश्चास्तु वः।

(सुपार्श्वनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री चन्द्रप्रभस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादाच्चन्द्रार्कतेजोऽस्तु वः।

(चन्द्रप्रभ भगवान की जय।)

ॐ श्री पुष्पदन्तस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात्पुष्पसायकातिशयोऽस्तु वः।

(सुविधिनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री शीतलस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादादशुभकर्ममलप्रक्षालनमस्तु वः।

(शीतलनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री श्रेयांसजिनस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात् श्रेयस्करोऽस्तु वः।

(श्रेयांसनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री वासुपूज्यस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादाद् रत्नत्रयवासं करोऽस्तु वः।

(वासुपूज्य भगवान की जय।)

ॐ श्री विमलस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात्सद्धर्मवृद्धिर्वैं माङ्गल्यं चास्तु वः।

(विमलनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री अनन्तनाथस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादाद् धनधान्याभिवृद्धिरक्षणमस्तु वः।

(अनन्तनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री धर्मनाथस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादाच्छर्मप्रचयोऽस्तु वः।

(धर्मनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्रीमदर्हत्परमेश्वर-सर्वज्ञपरमेष्ठी शान्तिनाथस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादा-च्छान्तिं करोऽस्तु वः।

(शान्तिनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री कुन्थुनाथस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात्तन्त्राभिवृद्धिकरोऽस्तु वः।

(कुन्थुनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री अरजिनस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात्परमकल्याणपरम्परास्तु वः।

(अरनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री मल्लिनाथस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादाच्छल्यविमोचनकरोऽस्तु वः।

(मल्लिनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री मुनिसुव्रतस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात्सम्यग्दर्शनं चास्तु वः।

(मुनिसुव्रतनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री नमिनाथस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात्सम्यग्ज्ञानं चास्तु वः।

(नमिनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री अरिष्टनेमिस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादादक्षयं चारित्रं ददातु वः।

(नेमिनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्रीमत्पार्श्वभट्टारकस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात्सर्वविघ्नविनाशनमस्तु वः।

(पार्श्वनाथ भगवान की जय।)

ॐ श्री वर्द्धमानस्वामिनः श्रीपादपद्मप्रसादात्सम्यग्दर्शनाद्यष्टगुणविशिष्टं चास्तु वः।

(महावीर भगवान की जय।)

ॐ ह्रीं लोकोद्योतनकरा अतीतकालसञ्जाता निर्वाण-सागर-महासाधु-विमलप्रभ-श्रीधर-सुदत्त-अमलप्रभ-उद्धर-अङ्गिर-सन्मति-सिन्धु-कुसुमाञ्जलि-शिवगण-उत्साह-ज्ञानेश्वर-परमेश्वर-विमलेश्वर-यशोधर-कृष्णमति-ज्ञानमति-शुद्धमति-श्रीभद्र-अतिक्रान्त-शान्ताश्चेति चतुर्विंशति भूतकालीन परमदेवपूजनप्रसादात्सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवाः महापद्मदेव-सुरदेव-सुपार्श्व-स्वयम्प्रभ-सर्वात्मभूत-देवपुत्र-कुलपुत्र-उदङ्क-प्रोष्ठिल-जयकीर्ति-मुनिसुव्रत-अर-निष्पाप-निष्कषाय-विपुल-निर्मल-चित्रगुप्त-समाधिगुप्त-स्वयम्भू-अनिवर्तक-जय-विमल-देवपाल-अनन्तवीर्याश्चेति भविष्यत्-कालीन परमदेवपूजनप्रसादात्सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ त्रिकालवर्ती परमधर्माभ्युदयाः सीमन्धर-युगमन्धर-बाहु-सुबाहु-सुजात-स्वयम्प्रभ-वृषभानन-अनन्तवीर्य-सुरप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चन्द्रानन-भद्रबाहु-भुजङ्गम-ईश्वर-नेमप्रभ-वीरसेन-महाभद्र-देवयश-अजितवीर्याश्चेति पञ्चविदेहक्षेत्र-विद्यमानविंशतिपरमदेवपूजनभक्तिप्रसादात् सर्वशान्तिर्भवतु तुष्टिपुष्टिश्च भवतु।

पूजिता भरताद्यैश्च, भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः।
चतुर्विधस्य सङ्घस्य, शान्तिं कुर्वन्तु शाश्वतीम्।।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत-पन्नगाः।
विषो निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।।
दुर्भिक्षादि महादोषा-निवारणपरम्पराः।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं, जिनश्रुतमुनीश्वराः।।
यत्संस्मरणमात्रेण, विघ्ना नश्यन्ति मूलतः।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं, जिनश्रुतमुनीश्वराः।।
शिवं च लभते प्राणी, यत्प्रसादात्प्रसादतः।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं, जिनश्रुतमुनीश्वराः।।

ॐ वृषभाद्ययो महतिमहावीरवर्द्धमानपर्यन्ताश्चतुर्विंशतितीर्थङ्करा अर्हन्तो भगवन्तः सर्वज्ञाः सर्वदर्शिनः सकलवीर्याः वीतरागद्वेषमोहास्त्रिलोकनाथास्त्रि-लोकमहितास्त्रिलोकप्रद्योतनकराजातिजरामरणविप्रमुक्ता भव्यजनहृत्-कमलवनसम्बोधनकरा देवाधिदेवा अनेकगुणगणालंकृतदिव्यदेहधराः पञ्च-महाकल्याणाष्टमहाप्रातिहार्यचतुस्त्रिंशदतिशयविशेषसम्प्राप्ताः सुरासुरोरगेन्द्र-मुकुटतटघटितमणिगणकिरणरागरञ्जितचारुचरणारविन्दद्वन्द्वा नृपतिशत-सहस्रालंकृत-सार्वभौमराजाधिराज-परमेश्वर-सकलचक्रवर्ती-बलदेव-वासु-देव-मण्डलीक-महामण्डलीक-महामात्य-सेनानाथ-राजश्रेष्ठि- पुरोहिता-धीश-कराञ्जलिनमित-करतलकमलमुकुलालंकृतपादपद्मयुगलाः विद्याधर-राजकिरीटकोटिरुचिररोविग्वृष्ट-चञ्चच्चरणकमलाः कुलिशनाल-रजतमृणाल-मन्दारकर्णिकारातिकुलगिरिशिखरिशेखरगगनगमन-मन्दाकिनी -महाह्रदनद -नदीसहस्रदलकमलवासिन्यादि-सर्वाभरणभूषिताङ्गसकल-सुरसुन्दरी-वृन्दवन्दित-चारुचरणकमलयुगला देवाधिदेवाः सशिष्यप्रति-शिष्यानुवर्गाः प्रसीदन्तु वः।

ॐ परम निर्वाणमार्गप्राप्ताः परममाङ्गल्य **((परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** ---नामधेयस्य सद्धर्मकार्येष्वैहिकामूत्रके च सिद्धाः सिद्धिं प्रयच्छन्तु वः।

(प्रत्येक वाक्य के बाद प्रीयन्तां-प्रीयन्तां बोलते हुए जलधारा छोड़नी चाहिए।)

ॐ आमौषधयः क्ष्वेलौषधयः जल्लौषधय विडौषधयः सर्वौषधश्च वः।

ॐ मतिःस्मृतिसंज्ञाचिन्ताभिनिबोधज्ञानिनश्च वः।

ॐ कोष्ठबुद्धिबीजबुद्धिपादानुसारीबुद्धिसम्भिन्नश्रोतृश्रवणाश्च वः।

ॐ जलचारणजङ्घाचारणतन्तुचारणभूमिचारणपुष्पचारणश्रेणिचारणपत्रचारण-फलचारणचतुरङ्गुलचारणाकाशचारणाश्च वः।

ॐ मनोबलिवचोबलिकायबलिनश्च वः।

ॐ सुधामधुक्षीरसर्पिराश्राव्यक्षीणमहानसाः वः।

ॐ सप्तर्द्धिगुणसंयुक्ताश्च वः।

ॐ उग्रतपो दिप्ततपो महातपो घोरतपोऽनुपमतपो महोग्रतपश्च वः।

ॐ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानिनश्च वः।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहंताणं णमो जिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अप्रतिचक्रे फट् विचक्राय ह्रीं ह्रीं स्वाहा। ऋद्धिमन्त्रभक्तिप्रसादात्सर्वेषां शान्तिर्भवतु, विशूचिका-ज्वरादिरोगविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं परमोहिजिणाणं शिरोरोगविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं अक्षीरोगविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं कर्णरोगविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं बीजबुद्धीणं ममात्मनि विवेकज्ञानं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पादाणुसारीणं परस्परविरोधविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिण्णसोदाराणं श्वासरोगविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं कवित्वं पाण्डित्वं च भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाणं प्रतिवादिविद्याविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धाणं पूर्णश्रुतज्ञानं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं सर्वशान्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं बहुश्रुतज्ञानं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं सर्ववेदिनो भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो चोद्दसपुव्वीणं स्वसमय-परसमयवादिनो भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंगमहाणिमित्तकुसलाणं जीवितमरणादिज्ञानं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वइड्ढिपत्ताणं कामितवस्तुप्राप्तिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं उपदेशदेशमात्रज्ञानं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं नष्टपदार्थचिन्ताज्ञानं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं आयुषावसानज्ञानं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं अन्तरीक्षगमनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं विद्वेषप्रतिहतं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं स्थावरजङ्गमकृतविषविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं वचस्तम्भनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं सेनास्तम्भनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं अग्निस्तम्भनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं जलस्तम्भनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं विषरोगादिविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं दुष्टमृगादिभयविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरपरक्कमाणं लूताङ्गर्भातिकावलिविनाशो भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणबंभयारीणं भूतप्रेतादिभयविनाशो भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं जन्मान्तरवैरभावविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं सर्वापमृत्युविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं अपस्मारप्रलापनं-चिन्ताविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं गजमारिविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं मनुष्यामरोपसर्गविनाशनो भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचिबलीणं ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं अपस्मारि-गो-अजमारिविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं अष्टादशकुष्टगण्डमालादिकविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं समस्तशीतज्वरविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं सर्वव्याधिविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं समस्तोपसर्गविनाशनं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं अक्षीणर्द्धिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं राजपुरुषादिभयविनाशं भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वसिद्धायदणाणं सर्वकार्यसिद्धिर्भवतु।

ॐ ह्रीं अर्हं णमो भयवदो महदिमहावीरवड्ढमाणबुद्धरिसीणं समाधिसुखं भवतु।

चतुःषष्ठी ऋद्धिमन्त्रपूजनभक्तिप्रसादाच्चतुःसङ्घानां सर्वशान्तिर्भवतु तुष्टिपुष्टिश्च भवतु। धन-धान्यसमृद्धिर्भवतु, रत्नत्रयप्राप्तिर्भवतु।

ॐ यमवरुणकुबेरवासवाश्च वः।

ॐ असुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमारादि दशविध-भवनवासिकाश्च वः।

ॐ अनन्तवासुकीतक्षककर्कोटकमहापद्मशङ्खपालकुलिशजयविजयादि-महोरगाश्च वः।

ॐ इन्द्राग्नियमनैर्ऋत्यवरुणवायुकुबेरेशानधरणेन्द्रसोमदेवता इति दश-विधदिग्देवताश्च वः।

ॐ सुरासुरोरगेन्द्रचमरचारणसिद्धविद्याधरकिन्नरकिंपुरुषगरुडगन्धर्वयक्ष-राक्षसभूतपिशाचाश्च वः।

ॐ बुध-शुक्र-बृहस्पति-अर्क-इन्दु-शनैश्चाङ्गारक-राहु-केतु-तारकादि महाग्रहज्योतिष्कदेवताश्च वः।

ॐ चमर-वैरोचन-धरणेन्द्र-नन्द-भूतानन्द-वेणुदेव-वेणुधारि-पूर्ण-वशिष्ठ-जलकान्त-जलप्रभ-घोष-महाघोष-हरिषेण-हरिकान्त-अमितगति -अमितवाहन-वेलाञ्जन-प्रभञ्जन-अग्निशिखी-अग्निवाहनाश्चेति विंशति भवनेन्द्राश्च वः।

ॐ गीतरति-गीतकान्त-सत्पुरुष-महापुरुष-सुरूप-प्रतिरूप-घोष-प्रतिघोष-पूर्णभद्र-मणिभद्र-पुरुषचूल-महाचूल-भीम-महाभीम-काल-महाकालाश्चेति षोडशव्यन्तरेन्द्राश्च वः।

ॐ नाभिराज-जितशत्रु-दृढराज-स्वयंवर-मेघराज-धरणराज-सुप्रतिष्ठ-महासेन-सुग्रीव-दृढरथ-विष्णुराज-वसुपूज्य-कृतवर्म-सिंहसेन-भानुराज-विश्वसेन-सुरसेन-सुदर्शन-कुम्भराज-सुमित्र-जयवर्मा-समुद्रविजय-अश्वसेन-सिद्धार्थश्चेति जिनजनकाश्च वः।

ॐ मरुदेवी-जया-सुषेणा-सिद्धार्था-मङ्गला-सुसीमा-पृथ्वीमती-लक्ष्मीमती-रामा-सुनन्दा-वैष्णवी-विजया-सुशर्मा-लक्ष्मणा-सुदत्ता-ऐरादेवी-कमलावती-सुमित्रा-प्रभावती-पद्मावती-सुभद्रा-शिवादेवी-ब्रह्मला-प्रियकारिण्यभिधानाश्चेति चतुर्विंशतिजिनजनन्यो वः।

ॐ वृषभमुख-महायक्ष-त्रिमुख-यक्षेश्वर-तुम्बुर-कुसुमवर-नन्दी-विजय-अजित-ब्रह्मेश्वर-कुमार-षण्मुख-पाताल-किन्नर-किम्पुरुष-

गरुड-गन्धर्व-महेन्द्र-कुबेर-वरुण-विद्युत्प्रभ-सर्वाह्न-धरणेन्द्र-मातङ्गनामा-श्चेति चतुर्विंशति यक्षेन्द्राश्च वः।

ॐ चक्रेश्वरी-रोहिणी-प्रज्ञप्ति-वज्रशृङ्खला-पुरुषदत्ता-मनोवेगा-काली-ज्वालामालिनी-महाकाली-मानवी-गौरी-गान्धारी-वैरोटी-अनन्तमती-मानसी-महामानसी-जया-विजया-अपराजिता-बहुरूपिणी-चामुण्डी-कुष्माण्डी-पद्मावती-सिद्धायिन्यश्चेति चतुर्विंशतियक्षीदेवताश्च वः।

ॐ कुलगिरिशिखरशेखरीभूत-महाह्रदादिसरोवरमध्यस्थित-सहस्रदल-कमलवासिन्यो मानिन्यः सकलसुरसुन्दरीवृन्दवन्दित-पादकमलाश्च वः।

ॐ यक्ष-वैश्वानर-राक्षस-नधृत-पन्नग-असुर-सुकुमार-पितृ-विश्वमालिनी-चमर-वैरोचन-महाविद्यमार-विश्वेश्वर-पिण्डाशनाश्चेति पञ्चदशतिथिदेवताश्च वः।

ॐ सौधर्म-ऐशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर-लान्तव-कापिष्ठ-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रार-आनत-प्राणत-आरण-अच्युतादि षोडशकल्पवासिनश्च वः।

ॐ हिट्ठिमहिट्ठिम-हिट्ठिममज्झिम-हिट्ठिमोवरिम-मज्झिमहिट्ठिम-मज्झिम-मज्झिम-मज्झिमोवरिम-उपरिमहिट्ठिम-उवरिममज्झिम-उवरिमोवरिम नवग्रैवेयकवासिनोऽहमिन्द्रदेवाश्च वः।

ॐ अर्च्च-अर्च्चमालिनी-वज्र-वैरोचन-सोम-सोमरूपक-अङ्क-स्फटिक-आदित्यादि नवानुदिश-वासिनश्च वः।

ॐ विजय-वैजयन्त-जयन्त-अपराजित-सर्वार्थसिद्धिनामधेय-पञ्चानुत्तर-विमानवासिनश्च वः।

ॐ सारस्वत-आदित्य-वह्नि-अरुण-गर्दतोय-तुषित-अव्याबाध-अरिष्टा-श्चेत्यष्टौ लौकान्तिक-देवगणाश्च वः।

ॐ अग्न्याभ-सूर्याभ-चन्द्राभ-सत्याभ-श्रेयस्कर-क्षेमङ्कर-वृषभेष्ट-कामचर-निर्माणरज-दिगन्तरक्षित-आत्मरक्षित-सर्वरक्षित-मरुदेव-वसु-देव-अश्व-विश्वाश्चेति देवर्षयो वः।

ॐ अतीत-अनागत-वर्तमान-विकल्पानेकानेकविविधगुण-सम्पूर्णाष्ट-गुणसंयुक्त-सकलसिद्ध-समूहाश्च वः।

सर्वकालमपि **(परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** ---नामधेयस्य

(प्रत्येक शब्द के साथ तथास्तु बोलना चाहिए।)

सम्पत्तिरस्तु, सिद्धिरस्तु, वृद्धिरस्तु, तुष्टिरस्तु, पुष्टिरस्तु, शान्तिरस्तु, कान्तिरस्तु, कल्याणमस्तु, सम्पदस्तु, मनःसमाधिरस्तु, श्रेयोभिवृद्धिरस्तु। शाम्यन्तु घोराणि, शाम्यन्तु पापानि।

(प्रत्येक शब्द के साथ वर्धतां बोलना चाहिए।)

पुण्यं वर्धतां, धर्मो वर्धतां, आयुर्वर्धतां, श्रीर्वर्धतां, कुलं गोत्रं चाभिवर्धतां।

स्वस्ति भद्रं चास्तु वः, स्वस्ति भद्रं चास्तु नः, ततो भूयो भूयः श्रेयो श्रेयः ॐ ह्रीं इ्वीं क्ष्वीं हं सः स्वस्त्यस्तु ते स्वस्त्यस्तु मे स्वाहा।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थङ्कराय श्रीमद् रत्नत्रयालंकृताय, दिव्यतेजोमूर्तये नमः, प्रभामण्डलमण्डिताय द्वादशगणपरिवेष्टिताय शुक्लध्यान -पवित्राय सर्वज्ञाय स्वयम्भुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रिलोक-महिताय अनन्तसंसारचक्रपरिमर्दनाय अनन्तज्ञानाय अनन्तदर्शनाय अनन्त-वीर्याय अनन्तसुखाय सिद्धाय बुद्धाय त्रिलोकवशङ्कराय सत्यज्ञानाय सत्य-ब्रह्मणे धरणेन्द्रफणामण्डलमण्डिताय उपसर्गविनाशनाय घातिकर्मक्षय-ङ्कराय अजराय अमराय अपवायं **(परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागर-परम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** ---नामधेयस्य अस्माकं

(प्रत्येक शब्द के बाद छिन्दि-छिन्दि, भिन्दि-भिन्दि बोलना चाहिए।)

मृत्युम्। हन्तुकामम्। रतिकामम्। बलिकामम्। क्रोधम्। मानम्। मायाम्। लोभम्। पापम्। हिंसाम्। मृषाम्। चौर्यम्। अब्रह्मम्। परिग्रहम्। वैरम्। वायुधारणम्। अग्निम्। सर्वशत्रुम्। सर्वोपसर्गम्। सर्वविघ्नम्। सर्वभयम्। सर्वराजभयम्। सर्वचौरभयम्। सर्वदुष्टभयम्। सर्वमृगभयम्। सर्वमात्मचक्रभयम्। सर्वपरमन्त्रम्। सर्वशूलरोगम्। सर्वक्षयरोगम्। सर्वकुष्ठरोगम्। सर्वक्रूररोगम्। सर्वनरमारीम्। सर्वगजमारीम्। सर्वाश्वमारीम्। सर्वगोमारीम्। सर्वमहिषमारीम्। सर्वधान्यमारीम्। सर्ववृक्षमारीम्। सर्वगुल्ममारीम्। सर्वपत्रमारीम्। सर्वपुष्पमारीम्। सर्वफलमारीम्।

सर्वराष्ट्रमारीम्। सर्वदेशमारीम्। सर्वविषमारीम्। सर्ववेतालशाकिनीभयम्। सर्ववेदनीयम्। सर्वमोहनीयम्। सर्वकर्माष्टकम्।

(प्रत्येक शब्द के बाद कुरु-कुरु बोलना चाहिए।)

ॐ सुदर्शनमहाराजचक्रविक्रमतेजोबलशौर्यवीर्यशान्तिम्। सर्वजना-नन्दनम्। सर्वभव्यानन्दनम्। सर्वगोकुलानन्दनम्। सर्वग्रामनगरखेटकर्वट-मटम्बपत्तनद्रोणमुखसंवाहानन्दनम्। सर्वलोकानन्दनम्। सर्वदेशानन्दनम्। सर्वयजमानानन्दनम्।

सर्वदुःखं हन-हन, दह-दह, पच-पच, कुट-कुट, शीघ्रं-शीघ्रं सर्व वशमानय हूं फट् स्वाहा।

ॐ पुण्याहं पुण्याहं प्रियन्तां-प्रियन्ताम्।

भगवन्तोऽर्हन्तः सर्वज्ञाः सर्वदर्शिनः सकलवीर्याः सकलसुखास्त्रिलोकेशा-स्त्रिलोकेश्वरपूजितास्त्रिलोकनाथास्त्रिलोकमहितास्त्रिलोकप्रद्योतनकरा जातिजरामरणविप्रमुक्ताः सर्वविदश्च।

ॐ श्री-ह्री-धृति-कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्म्यश्च वः प्रियन्तां-प्रियन्ताम्।

ॐ वृषभादिवर्द्धमानाः शान्तिकराः सर्वकर्मरिपुविजयकान्तार-दुर्गविषयेषु रक्षन्तु मे जिनेन्द्राः।

आदित्य-सोम-अङ्गारक-बुध-बृहस्पति-शुक्र-शनैश्चर-राहु-केतुनाम नवग्रहाश्च वः प्रियन्तां-प्रियन्ताम्।

तिथि-करण-नक्षत्र-वार-मुहूर्त-लग्नदेवाश्च इहान्यत्रग्रामनगरा-धिदेवताश्च ते सर्वे गुरुभक्ता अक्षीणकोश-कोष्ठागारा भवेयुः दानतपोवीर्यधर्मा-नुष्ठानादि नित्यमेवास्तु मातृ-पितृ-भ्रातृ-पुत्र-पौत्र-कलत्र-गुरु-सुहृत्स्वजन-सम्बन्धिबन्धुवर्गसहितस्यास्य यजमानस्य **(परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** --- नामधेयस्य

(प्रत्येक शब्द के बाद तथास्तु बोलना चाहिए।)

धनधान्यैश्वर्यद्युतिबलयशःकीर्तिबुद्धिवर्द्धनं भवतु। सामोदः प्रमोदो भवतु। शान्तिर्भवतु। कान्तिर्भवतु। तुष्टिर्भवतु। पुष्टिर्भवतु। सिद्धिर्भवतु। वृद्धिर्भवतु। अविघ्नमस्तु। आरोग्यमस्तु। आयुष्यमस्तु। शुभकर्मास्तु। कर्मसिद्धिरस्तु।

शास्त्रसमृद्धिरस्तु। इष्टसम्पदस्तु। अरिष्टनिरसनमस्तु। धनधान्यसमृद्धिरस्तु।

काम माङ्गल्योत्सवः सन्तु, शाम्यन्तु घोराणि, शाम्यन्तु पापानि।

(प्रत्येक शब्द के साथ वर्द्धतां बोलना चाहिए।)

पुण्यं वर्द्धताम्। धर्मो वर्द्धताम्। श्री च वर्द्धताम्। आयुर्वर्द्धताम्। कुलगोत्रं चाभिवर्द्धताम्।

स्वस्ति भद्रं चास्तु वः, स्वस्ति भद्रं चास्तु नः, इवीं क्वीं हं सः स्वस्त्यस्तु ते स्वस्त्यस्तु मे स्वाहा।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधिव्यसनवर्जितम्।
अभयं क्षेममारोग्यं, स्वस्तिरस्तु विधीयते।।

(प्रत्येक शब्द के साथ तथास्तु बोलना चाहिए।)

श्री शान्तिरस्तु। शिवमस्तु। जयोऽस्तु। नित्यमारोग्यमस्तु। तव दृष्टिसुपुष्टिरस्तु। कल्याणमस्तु। सुखमस्तु। अभिवृद्धिरस्तु। दीर्घायुरस्तु। कुल-गोत्र-धन-धान्यं सदास्तु।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये नमः श्री शान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वपापप्रणाशनाय सर्वविघ्नविनाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृत-क्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वक्षामरडामर-विनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा **(परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती, आचार्यश्री आदिसागरपरम्परायां तत्पट्टशिष्य आचार्यश्री महावीरकीर्तेः पट्टशिष्य आचार्यश्री सन्मतिसागरस्य पट्टशिष्य आचार्यश्री सुविधिसागरस्य ससंघ सानिध्ये)** ---नामधेयस्य सर्वशान्तिं कुरु-कुरु तुष्टिं कुरु-कुरु पुष्टिं कुरु-कुरु वषट् स्वाहा।

इत्यनेन मन्त्रेण नवग्रहशान्त्यर्थं गन्धोदकधारावर्षणम्।

पद्मप्रभ-चन्द्रप्रभ-वासुपूज्य-विमल-अनन्त-धर्म-शान्ति-कुन्थु-अर-नमि-वर्द्धमान-वृषभ-अजित-सम्भव-अभिनन्दन-सुमति-सुपार्श्व-शीतल-श्रेयांस-पुष्पदन्त-मुनिसुव्रत-मल्लि-नेमि-पार्श्वनाथ इत्येभ्यो नमो नमः।

पूर्वोक्त मन्त्राणां पूजनभक्तिप्रसादात् ऋष्यार्यिकाश्रावकश्राविकानां सर्वक्रोध-मान-माया-लोभ-हास्य-रति-अरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्रीवेद-पुरुषवेद-नपुंसकवेदविनाशनं भवतु, मिथ्यात्व-राग-द्वेष-मोह-मत्सर-असूया-ईर्ष्या-विभाव-विकार-विषाद-प्रमाद-कषाय-विकथाविनाशनं भवतु,

सर्वपश्चेन्द्रियविषयेच्छा-स्नेह-आशा-रौद्राकुलता-व्याधि-दीनता-पाप-दोष-विरोधविनाशनं भवतु, सर्वममकार-विकल्प-निद्रा-तृष्णा-अधिताप-दुःख-वैर-अहङ्कार-सङ्कल्पविनाशो भवतु, सर्वाहार-भय-मैथुन-परिग्रह-संज्ञाविनाशो भवतु, सर्वसंख्यातकर्मविनाशनं भवतु, सर्वासंख्यातकर्मविनाशनं भवतु। सर्वमोहनीय-ज्ञानावरणीय-दर्शनावरणीय-अन्तराय-वेदनीय-नाम-गोत्र-आयुःकर्मविनाशनं भवतु।

(छन्द = वसन्ततिलका)

कल्याणमस्तु कमलाभिमुखी सदास्तु,
दीर्घायुरस्तु कुलगोत्रसमृद्धिरस्तु।
आरोग्यमस्त्वभिमतार्थफलाप्तिरस्तु,
भद्रं तवास्तु जिनपुङ्गवभक्तिरस्तु।।

(छन्द = शार्दूलविक्रीडित)

श्रीमज्जैनजिनार्चितप्रगटित-स्याद्वादरत्नाकरः,
सद्धर्मामृतचन्द्रसुश्रुतकरो-लावण्यरत्नाकरः।
मोक्षद्वारकपाटपाटनपटुः प्रध्यानरत्नाकरः,
भौमो भूरि गुणाकरो विजयते योगीन्द्ररत्नाकरः।।

पवित्रतरगन्धोदकेन जिनमभिषेचयामि स्वाहा।

गन्धोदक लेने का मन्त्र

(छन्द = शार्दूलविक्रीडित)

मुक्तिश्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकं,
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवी राज्याभिषेकोदकम्।
स्यात्सज्ज्ञानचरित्रदर्शनलता संसिद्धिसम्पादकं,
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन! स्नानस्य गन्धोदकम्।।

(छन्द = शार्दूलविक्रीडित)

नेत्रद्वन्द्वरुजो विनाशनकरं गात्रं पवित्रीकरं,
वातोपित्तकफादिदोषरहितं गात्रं च सत्रं भवेत्।
कामालाक्षयकुष्टरोगविषमग्राहक्षयङ्कारि तत्,
श्रीमत्पार्श्वजिनेन्द्रपादयुगल-स्नानस्य गन्धोदकम्।।

(छन्द = शार्दूलविक्रीडित)

घातिव्रातविघातजातविपुल-श्रीकेवलज्योतिषो-
देवस्यास्य पवित्रगात्रकलनात्पूतं हितं मङ्गलम्।
कुर्याद् भव्यभवार्तिदावशमनं स्वर्मोक्षलक्ष्मीफलं,
प्रोद्यद्धर्मलताभिवर्द्धनमिदं सद्गन्धगन्धोदकम्।।

(छन्द = शार्दूलविक्रीडित)

निःशेषाभ्युदयोपभोगफलवत्पुण्याङ्कुरोत्पादकं,
धृत्वा पङ्कनिवारकं भगवतः स्नानोदकं मस्तके।
ध्यातो विश्वमुनीश्वरैरभिनुतौ प्रेक्षावतामर्चितौ,
इन्द्राद्यैर्मुहूरर्चितौ जिनपतेः पादौ समभ्यर्चये।।

(छन्द = उपजाति)

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः,
करोतु शान्तिं भगवाँज्जिनेन्द्रः।।

ॐ शान्तिः -मङ्गलं भूयात्।

आत्मशान्ति को प्राप्त करने के लिए तथा विविध प्रकार के संकटों का विनाश करने के लिए जिनेन्द्र भगवान के मस्तक पर भक्तिपूर्वक जो धारा की जाती है, उसे शान्तिधारा कहते हैं।

वर्तमान में अनेक प्रकार की शान्तिधाराएँ उपलब्ध हो रही हैं। अधुनातन विद्वानों ने आधुनिक विघ्नों के नाम जोड़ कर भी इनका निर्माण किया है। इन सभी का उद्देश्य समान होने के कारण सभी उचित ही हैं।

शान्तिधारा करते समय दो नियमों का परिपालन अवश्य करना चाहिए। यथा-

१. शान्तिधारा करते समय नियम से मौन रखना चाहिए।

२. शान्तिधारा करते समय धारा को अखण्डित रखना चाहिए।

शान्तिधारा करते समय जितनी उपयोगशुद्धि होगी, शान्तिधारा का फल उतनी ही शीघ्रता से प्राप्त होगा।

परिशिष्ट

बहुत से लोगों के कुतर्क हैं कि पूर्व में केवल पाँच ही अमृत थे। परवर्ती लोगों ने बोली से धन को प्राप्त करने के लिए अनेक प्रकार के द्रव्यों से अभिषेक का आरम्भ किया। ऐसा कहना उचित नहीं है। इक्षुरसाभिषेक केवल इक्षुरसाभिषेक न होकर अनेक फलों के अभिषेक का प्रतिनिधि है।

किन-किन फलों से अभिषेक हो सकता है?

इस विषय में कुछ फलों का नामोल्लेख करते हुए आचार्यप्रवरश्री सोमदेव जी महाराज ने लिखा है-

द्राक्षाखर्जूरचोचेक्षुप्राचीनामलकोद्भवैः।
राजादनाम्रपूगोत्थैः स्नापयामि जिनं रसैः।।

(अभिषेकपाठसंग्रह पृष्ठ ४४)

अर्थात् :- द्राक्षा **अंगूर**-खर्जूर **खजूर**-चोच **नारियल**-इक्षु **गन्ना**-प्राचीन **पूराने** आमलक-उद्भवैः **आँवले से निर्मित,** राजादन, आम्र **आम**-पूग **सुपारी** उत्थैः **इनसे बने हुए** रसैः **रसों से** जिनम् **जिनेन्द्र का** स्नापयामि **अभिषेक करता हूँ।**

विविध फलों के अभिषेक के मन्त्र भी प्राप्त होते हैं। उनमें से कुछ फलों के अभिषेकविषयक पद्य इस प्रकार हैं-

नारियलरस का अभिषेक

नारिकेलरसैः स्वच्छैः, शीतैः पूतैर्मनोहरैः।
स्नानक्रियां कृतार्थस्य, विदधे विश्वदर्शिनः।।

(अभिषेकपाठसंग्रह पृष्ठ २८२)

आम्ररस का अभिषेक

सपक्वैः कनकच्छायैः, सामोदैमोदकारिभिः।
सहकाररसैः स्नानं, कुर्म शर्मैकसद्मनः।।

(अभिषेकपाठसंग्रह पृष्ठ २८३)

शर्करारस का अभिषेक

मुक्त्यङ्गनानर्मविकीर्यमानैः,
पिष्टार्थकर्पूररजोविलासैः।

माधुर्यधुर्यैर्वरशर्करौघै–
र्भक्त्या जिनस्य स्नपनं करोमि।।

(अभिषेकपाठसंग्रह पृष्ठ २८३)

सर्वौषधि अभिषेक भी अनेक प्रकार के अभिषेकों का प्रतिनिधि है। उसमें वृक्षों के छालों से निर्मित काढ़ों से अभिषेक होता है। उसे ही कषायाभिषेक कहते हैं।

कषायाभिषेक

क्षीरद्रुमत्वक्कलितैः सुखोष्णैः,
कषायनीरैःरभिषेचयामः।
कषायनाशोद्यदनन्तबोधं,
भवज्वरामूलविलोपनार्थम्।।

(अभिषेकपाठसंग्रह पृष्ठ ३३३)

अभिषेक जैनविधि नहीं है–ऐसा कथन अनेक विद्वानों के मुख से सुना जा रहा है।

जैनागम का परिशीलन करने पर उनका यह कथन भ्रान्त सिद्ध होता है। चरणानुयोग के श्रावकाचारों में इसका विशेष वर्णन पाया जाता है। जिन द्रव्यों से अभिषेक होता है–उन द्रव्यों से अभिषेक करने पर प्राप्त होने वाले फलों का विस्तारपूर्वक वर्णन आचार्यों ने किया है।

पाँचवीं शताब्दी के ज्येष्ठ और श्रेष्ठ आचार्यश्री पूज्यपाद जी महाराज ने नन्दीश्वरभक्ति में **अभिषेकप्रेक्षणिका––**आदि वाक्यों का प्रयोग का प्रयोग किया है।

पण्डितप्रवरश्री पन्नालाल जी सोनी ने **अभिषेकपाठसंग्रह** नामक कृति का संकलन किया है। उसमें उन्होंने अनेक अभिषेकपाठों का संकलन किया है। वे सारे अभिषेक वर्षों पूराने हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर श्रवणबेलगोला का अभिषेक स्मरणीय है। आचार्यश्री नेमिचन्द्र जी महाराज जैसे वरिष्ठतम आचार्यदेव के सानिध्य में गुल्लिका अज्जी के द्वारा दूध का अभिषेक किया गया था। सारांश यह है कि अभिषेक मूलतः जैनपद्धति है।

प्रशस्ति

(छन्द = अनुष्टुप्)

विज्ञानं विमलं यस्य, भासते विश्वगोचरम्।
नमस्तस्मै श्री वीराय, पञ्चसंसारभेदिने।।
वन्देऽहं शारदा माता, जगद्ध्वान्तविनाशिनीम्।
भासिनीं विश्वतत्त्वानां, भानुभामिव निर्मलाम्।।
वन्दित्वा च गणाधीशं, गौतमं श्रुतपारगम्।
कुन्दकुन्दादि सूरीणां, वन्दे भक्त्या पुनः पुनः।।

(छन्द = उपजाति)

चारित्रचक्री सूरिरादिसिन्धु-,
स्तत्पट्टशिष्यो महावीरकीर्तिः।
तत्पट्टवारान्निधिपूर्णचन्द्रः,
श्री सन्मतिं हि प्रणमामि नित्यम्।।

(छन्द = अनुष्टुप्)

सन्मतेः पट्टशिष्योऽहं, सुविधिसिन्धुसञ्ज्ञकः।
अनुवादमकुर्वेऽहं, विशदा देशभाषया।।
यावच्छशिरवी भौमे, यावत् सलिलराशयः।
तावदयं सत्छास्त्रोऽपि, तिष्ठतु क्षितिमण्डले।।

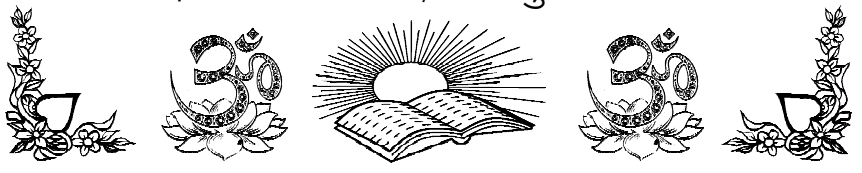

परिचय

लेखिका

पूज्या गणिनी-आर्यिकाश्री सुविधिमती माताजी

भारत देश की इस पावन वसुन्धरा पर श्रमण-संस्कृति की अजस्र धारा को प्रवाहित कर अनन्त भव्यात्माओं का विकास करने वाले अनेक दिगम्बर तपस्वी सन्त हुये हैं। उस सन्त-परम्परा में रवि के समान तेजस्वी और शशि के समान कान्तिशाली सन्तप्रवर हैं, मेरे आराध्य गुरुदेव परम पूज्य आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज।

ये महान सन्त हैं। सरलता, गुरुभक्ति, आगमनिष्ठता, गुणानुराग, तार्किकता, निस्पृहता, श्रद्धा की अखण्डता, जिज्ञासा की प्रखरता, निर्भयता, निष्पक्षता, वात्सल्यता, लघुता, विनयता आदि अनेकानेक गुणरत्नों से युक्त सागर का नाम ही सुविधिसागर है। ऐसे अचिन्त्य-प्रज्ञाशक्ति के धारक, गुरुदेव का परिचय लिख पाना सहज नहीं है।

महाराष्ट्र प्रान्त के औरंगाबाद नामक शहर में धर्मरत्न श्री इन्द्रचन्द जी पापड़ीवाल (वर्तमान में संघस्थ मुनिश्री सुनम्रसागर जी महाराज) का घर-आँगन सब खिल उठा। सौभाग्यवती माता कंचनदेवी (वर्तमान में संघस्थ क्षुल्लिकाश्री सुध्येयमती माताजी) का प्रथम मातृत्व धन्य हो गया कि उनकी कोख से १९-३-१९७१ को ऐसे बालक ने जन्म लिया, जो विश्व के कल्याण को साधने वाला महान साधक बन गया।

नवजात बालक का नाम क्या रखा जाय? परिवार में इस विषय पर बहुत ऊहापोह हुये। सभी ने मिल कर पहले **यशवन्तकुमार** यह नाम रखा। दादी माँ (समाधिस्थ आर्यिकाश्री सुवर्णमती माताजी) इस नाम से सहमत नहीं हुई। उन्होंने बालक को **मनोजकुमार** कहना प्रारम्भ किया। परिवार के कुछ सदस्यों को यह नाम अच्छा नहीं लगा। अतः उन्होंने बालक को **जयकुमार** यह संज्ञा दी। माता का प्यार बालक को **जयेश** कह कर पुकारने

लगा। भाई, बहन और मित्रों के मध्य में यह नाम भी लम्बा था। अतः उन्होंने तो हमेशा **जय** कह कर ही पुकारा। इस प्रकार उस बालक ने बचपन में ही अनेक सार्थक नामों को सुशोभित किया।

जिस प्रकार दीपक स्वयं प्रकाशित होकर दूसरों को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार जयकुमार भी स्वयं अपने जीवन को आदर्शमयी बना कर दूसरों को आदर्श की शिक्षा देने लगा। **कहो मत, करके दिखाओ** - यह नीति जयकुमार के जीवन का आदर्श थी। वे सदैव अपनी आदर्श नीति के परिपालक और उपदेशक रहे।

संघर्ष उत्कर्ष का बीज है - यह उक्ति चरित्रनायक के जीवन पर सार्थक होती दिखाई देती है। जयकुमार को बचपन से ही नासूर नामक अक्षिरोग था। देढ़ वर्ष की आयुपर्यन्त ही उनकी तीन बार शल्यचिकित्सा हो चुकी थी। पहली शल्यचिकित्सा के समय तो जयकुमार मात्र तीन दिन के थे। पन्द्रह वर्ष की आयु पर्यन्त छह बार नेत्रों की शल्यचिकित्सा हो चुकी थी।

एक बार चिकित्सकों ने माता कंचनबाई को सलाह दी कि बालक बहुत कमजोर और नेत्रशक्ति से हीन है। अतः इसे रोज एक/दो अण्डे खिलाये जाये। इससे इसका जीवन बच जायेगा। अन्यथा, यह बालक अकालमरण को प्राप्त कर सकता है।

माँ ने ओजपूर्ण शब्दों में कहा कि मुर्गी के होने वाले बच्चे को मार कर मैं अपने बच्चे को जीवित रखना नहीं चाहती। मेरे बेटे के भाग्य में अल्पायु और मेरे भाग्य में पुत्रसुख का अभाव ही लिखा हो तो विधि के इस लेख को कौन मिटा सकता है? यदि मेरा बेटा मर जाता है तो मैं दो /चार दिन रो लूँगी, किन्तु मुर्गी के बेटे को मार कर मैं जीवनभर की प्रसन्नता प्राप्त नहीं करना चाहती।

पाँच वर्ष तक भी जयकुमार ठीक से बैठ नहीं पाया। तब चिन्तित माता-पिता ने चिकित्सकों की शरण ग्रहण की। चिकित्सकों ने बताया कि बालक की रीढ़ की हड्डी कमजोर होने से बालक बैठ नहीं पा रहा है। जीवन भर सम्भवतः यह ठीक से नहीं बैठ पायेगा। आज भी आचार्यश्री की आँखें और कमर-ये दोनों अंग कमजोर हैं, किन्तु उनके आत्मबल की कितनी प्रशंसा की जाये कि वे सोलह-सोलह घण्टों तक अध्ययन करते हुये पाये जाते हैं।

उनकी सहिष्णुता जगत् को यह शिक्षा प्रदान करती है कि लगन सच्ची हो तो प्रतिकूलतायें भी अनुकूलताओं में परिवर्तित हो जाया करती हैं तथा किसी भी क्षेत्र में सफलता पाने के लिये शारीरिक बल और बाह्य व्यवस्थाओं से अधिक आत्मबल आवश्यक होता है। मनुष्य परिस्थितियों का दास नहीं, अपितु स्वामी है।

बाल्यकाल से ही जयकुमार की बुद्धि अतिशय तीक्ष्ण थी। पाठ्यविषय कितना ही कठिन क्यों न हो, उनके बुद्धिवैभव के कारण वह सरल हो जाया करता था। एक बार याद किया हुआ प्रकरण उन्हें सदा के लिये याद रह जाता है। परम पूज्य युगनायक, आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज उनके मस्तिष्क को कम्प्युटर की उपमा दिया करते थे। वाक्चातुर्य तो उन्हें मिला हुआ सृष्टि का अनोखा उपहार ही था।

मूर्ति लहान पण कीर्ति महान यह उक्ति उन पर अक्षरशः घटित हुआ करती थी। विद्याध्ययन की लगन तथा प्रत्युत्पन्नमति के कारण वे अपने इष्ट-मित्रों में सर्वप्रिय थे।

आपका स्पष्टवक्तव्य आपके व्यक्तित्व का महानतम अलंकरण है। यह गुण आपमें जन्मजात है। एक बार विद्यालय में नियम बना कि प्रत्येक विद्यार्थी टाई लगा कर तथा जूते पहन कर विद्यालय में आयेगा। जयकुमार ने दोनों ही नियमों का पालन नहीं किया। शिक्षक महोदय ने फटकार लगाते हुये कहा कि यदि विद्यालय में रहना हो तो टाई लगा कर और जूते पहन कर ही आना होगा।

जयकुमार ने कहा - गुरुजी! मैं विद्यालय को सरस्वती का मन्दिर मानता हूँ। मन्दिरों में जूते पहन कर जाने जैसा असभ्य मैं नहीं हूँ। रही बात टाई की, मैं जैन हूँ। ईसाइयों का प्रतीक चिह्न अथवा फैशन का प्रतीक चिह्न पहन कर मैं अध्ययन नहीं करूँगा। विद्यार्थी का प्रमुख लक्षण विनय है, वस्त्राभूषण नहीं। अतः मैं केवल विनय को धारण करके विद्यालय में आ सकता हूँ। अन्ततः आपको इस कार्य को बाध्य नहीं किया गया।

आप जब नौवीं कक्षा में अध्ययन कर रहे थे, तब विद्यालय में पन्द्रह अगस्त के निमित्त से तैयारियाँ चल रही थी। राष्ट्रगीत पुनः पुनः बुलवाया जा रहा था। जयकुमार अपनी कक्षा में जाकर बैठ गये। शिक्षक ने इस दृश्य

को देख कर उन्हें राष्ट्रगीत को पुनरावर्तन करने का आदेश दिया। जयकुमार ने स्पष्टतः नकार दिया। बात इतनी बढ़ी कि यह प्रसंग प्रधानाध्यापिका तक जा पहुँचा। उन्होंने पूछा - जयकुमार! तुम इस तैयारी में सम्मिलित क्यों नहीं हो रहे हो? जयकुमार ने उत्तर दिया कि जिस बालक को राष्ट्रगीत नहीं आता हो, उसे नौवीं कक्षा में बैठने का अधिकार है क्या? यदि राष्ट्रगीत व्यवस्थित आता हो तो फिर उसे स्वतन्त्रतादिवस के अवसर पर तैयारी करने की आवश्यकता ही क्या है? उनके इस तर्क का उत्तर किसी भी शिक्षक अथवा शिक्षिका के पास नहीं था। अन्ततः विद्यालय की प्रधानाध्यापिका ने निर्णय दिया कि तुम इस तैयारी में सम्मिलित नहीं होना चाहो तो मत हो, किन्तु तुमसे एक प्रार्थना है कि यह तर्क अन्य छात्रों के मध्य मत देना, क्योंकि हमें तो औपचारिकता का निर्वहन करना ही पड़ेगा।

साधुओं की वैयावृत्ति करना तथा दीन-अनाथों की सेवा करना उनका स्वाभाविक गुण था। धार्मिक संस्कार तो जैसे उनमें पूर्वभव के ही अनुगामी थे। निरन्तर गृहत्याग करने के लिये आपका मन छटपटाया करता था।

छठीं, सातवीं तथा आठवीं कक्षा की पढ़ाई के लिये आपको बाहुबली (कुम्भोज) के बाल-ब्रह्मचर्याश्रम में रखा गया। उस समय श्रीक्षेत्र पर परम पूज्य मुनिप्रवरश्री समन्तभद्र जी महाराज विराजमान थे। वे आगम के तलस्पर्शी विद्वान तथा ज्येष्ठ सन्त थे। उनकी वन्दना करने के लिये अथवा उनसे शिक्षा पाने के लिये भी साधुओं का आगमन इस क्षेत्र पर हुआ करता था। अतः माता-पिता से दूर रहने का आपको कभी दुःख नहीं हुआ। आप तो गुरु-चरणों में रह कर अत्यानन्द में थे। मुनिप्रवरश्री का स्नेह आपको पुनः पुनः उनके चरणों में ले जाया करता था। आप भी गुरुदेव की सेवा कर पुण्यार्जन कर रहे थे। विद्यालय से अवकाश पाने के उपरान्त आप अपना समय गुरुचरणों में ही व्यतीत किया करते थे। गुरुसंगति आपकी पात्रता के विकास में कारण बनी। वही पात्रता का विकास आपकी संयमयात्रा का कारण बना।

एक दिन विद्यालय में जयकुमार का ओजपूर्ण भाषण हुआ। उस कार्यक्रम में मुनिप्रवरश्री समन्तभद्र जी महाराज का मंगल सानिध्य प्राप्त था। मुनिप्रवरश्री जयकुमार के भाषण को सुन कर बहुत प्रभावित हुये। उन्हें बालक में धर्म

का भावी कर्णधार दिखाई देने लगा। सायंकाल के समय जब जयकुमार गुरुवन्दना के लिये पहुँचे तो गुरुदेव ने कहा - आप होनहार बालक हैं। आप यदि अपने आपको धर्म को सौंप देते हो तो आपका तो भला होगा ही, साथ में अनेक भव्य जीवों का भी भला होगा। गुरुमुख से इतनी बड़ी बात सुन कर जयकुमार अभिभूत हो उठे। एक बार मन से मन के तार मिलने के बाद कौन बुद्धिमान विलम्ब करेगा? जिसे गुरुकृपा मिल जाती है, उसे तो मोक्षमार्ग ही क्या? साक्षात् मोक्ष ही मिल जाता है। जयकुमार शीघ्र ही श्रीफल लेकर आया और गुरुचरणों में समर्पित कर बोला-हे गुरुदेव! मुझ पर अनुग्रह करते हुये आप मुझे आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत प्रदान कीजिये।

गुरुदेव ने कहा - बेटा! अभी तुम बहुत छोटे हो। जयकुमार ने कहा - गुरुदेव! आप जैसे महान अनुभवी के श्रीचरणों का आश्रय पाकर मैं अपने आप ही बड़ा बन जाऊँगा। गुरुदेव को व्रत देने में कुछ संकोच-सा हो रहा था। अतः उन्होंने टालने की दृष्टि से कहा कि तुम्हारे माता-पिता यहाँ नहीं हैं। तुम उन्हें आने दो। उनके आने पर व्रत-विषयक चर्चा करेंगे। किन्तु जयकुमार कहाँ मानने वाला था। उसका मन तो व्रतों को ग्रहण करने के लिये छटपटा रहा था।

उसने हाथ जोड़ कर कहा - गुरुदेव ! मेरी तो माता भी आप हैं और पिता भी। आपके अतिरिक्त मेरा इस दुनियाँ में कोई नहीं है। अतः मेरा उद्धार करने में विलम्ब मत कीजिये और मुझे यह महानतम व्रत प्रदान कर मुझ पर आपका आशीर्वाद बनाये रखिये।

ऐसे अनूठे शिष्य को प्राप्त करके कौन सद्गुरु आनन्दित नहीं होगा? फिर भी, मुनिप्रवरश्री अचानक इतने बड़े व्रत को देने तैयार नहीं हुये। उन्होंने समझाया कि अभी आप केवल आयु के पच्चीस वर्षपर्यन्त ब्रह्मचर्य से रहने का नियम कीजिये। उचित समय आने पर आगे की चर्चा करेंगे। जयकुमार का मन नहीं मान रहा था, किन्तु गुरु आज्ञा अनुलंघ्यनीय होती है। यही सोच कर उसने आयु के पच्चीस वर्षपर्यन्त ब्रह्मचारी रहने का नियम कर लिया। उसी दिन उसने कन्दमूलत्याग, रात्रिभोजनत्याग, शूद्रजलत्याग आदि अनेक प्रकार के नियम ले लिये। उसी दिन जयकुमार ने आजीवन जूते-चप्पल आदि का त्याग कर दिया। उस समय जयकुमार की आयु मात्र

दस वर्ष की थी। गृहीत नियमों का परिपालन करते समय उनमें कभी प्रमाद नहीं आया। व्रतों के प्रति वे सदैव उत्साही रहते थे।

आपने दसवीं की परीक्षा दी। परीक्षा के दूसरे ही दिन आपने गुरुचरणों में पहुँचने का मानस बनाया। आपने माता-पिता से अनुमति चाही। २८-४-१९८६ को आपने प्रातः पाँच बजे घर छोड़ा और गुरु-चरणों का वरण किया। उस समय आपकी आयु पन्द्रह वर्ष एक माह और नौ दिनों की थी। अल्पायु में इस प्रकार का अद्भुत साहस प्रशंसनीय है।

जयकुमार ने अक्षयतृतीया (ईसवी सन् १९८६) के पावन अवसर पर नेरी में (जलगाँव) आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण किया। गुरुदेव ने उनका नाम ब्रह्मचारी जैनेन्द्रकुमार रखा। उस दिन से आपने धोती-दुपट्टा इन दो वस्त्रों के अतिरिक्त अन्य वस्त्रों का भी त्याग कर दिया। धोतियों की संख्या भी परिमित कर केवल तीन ही रखी। आजीवन के लिये संकल्पपूर्वक घर का परित्याग कर दिया।

आषाढ़ शुक्ला अष्टमी के दिन आपने अतिशय क्षेत्र कचनेर (औरंगाबाद) में सातवीं प्रतिमा का व्रत भी ग्रहण कर लिया। अस्वस्थ अवस्था में सायंकाल में जल की छूट रख कर आपने शेष काल में एकाशन का नियम भी लिया। दिनांक १०-३-१९८७ को आपने गुरुदेव से निवेदन किया कि आपका दीक्षादिवस दिनांक १३-३-१९८७ को आ रहा है। उसी दिन आप मुझे जिनदीक्षा दीजिये। गुरुदेव ने कहा कि मैं क्षुल्लक दीक्षा दे सकता हूँ। शिऊर नगर में दिनांक १३ मार्च १९८७ को जैनेन्द्रकुमार क्षुल्लकश्री रवीन्द्रसागर जी महाराज बन गये।

क्षुल्लक अवस्था में आपका वर्षायोग न्यायडोंगरी (नाशिक) में हुआ था। आपकी चारित्रनिष्ठा से प्रभावित होकर गुरुदेव ने २१-१०-१९८७ को आपको ऐलक दीक्षा प्रदान की। दीक्षा के उपरान्त आपका नाम ऐलकश्री **रूपेन्द्रसागर** जी महाराज रखा गया।

आप गुरुचरणों से निकल कर अपने दादागुरु परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के श्रीचरणों में पहुँचे। संघ के साधुओं की वैयावृत्ति करना, ध्यान-अध्ययन में रत रहने का प्रयत्न करना आदि वृत्ति के कारण ऐलक जी ने संघ का मन मोह लिया।

वैशाख शुक्ला सप्तमी (११ मई १९८९) के पावन अवसर पर प्रातःकालीन शुभ बेला में ऐलक जी की मुनिदीक्षा सम्पन्न हुई। नवदीक्षित मुनि को गुरुदेव ने **सुविधिसागर** नाम प्रदान किया। गुरुदेव के द्वारा रखा गया यह नाम कितना अन्वर्थक है? इसे सभी जानते हैं।

दीक्षा के उपरान्त आपकी ज्ञानपिपासा अत्यधिक तीव्र हो गई। सागवाड़ा में हुये पहले वर्षायोग में ही आपने गुरु के आदेश से ज्योतिष में कुण्डली का अध्ययन किया तथा स्वर-ज्योतिष पढ़ा। उस वर्षायोग में गुरुदेव ने आपको आयुर्वेदशास्त्र और मन्त्रशास्त्र के अनेक रहस्यों से परिचित कराया। गुरुचरणों में बैठ कर अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी बन कर आप चारों अनुयोगों का अध्ययन करते थे।

वर्षायोग के उपरान्त आपने गुरु के सानिध्य को छोड़ कर ज्ञान की प्राप्ति के साधन जुटाने प्रारम्भ किये। इसके फल से आप शीघ्र ही संस्कृत और प्राकृत भाषा के अध्येता बन गये। आपने अपने बल पर आगम, अध्यात्म, न्याय और आचारशास्त्रों का अध्ययन किया। विचारों की परिशुद्धि के लिये आप पुराणशास्त्रों का स्वाध्याय करते थे। आप चारों ही अनुयोगों में पारंगत हैं। आपने लौकिक विषयों का भी भली-भाँति अध्ययन किया है। छन्द, ज्योतिष, आयुर्वेद, मन्त्र, योगचिकित्सा, चुम्बकचिकित्सा, एक्युप्रेशर-चिकित्सा, एक्युपंचरचिकित्सा, मालिशचिकित्सा, रेकी आदि का भी आपने विधिवत् अध्ययन किया है।

अजैन ग्रन्थों का अध्ययन भी आपने अत्यन्त लगन से किया है। चारों वेद, अठारह पुराण, कुछ उपपुराण, एक सौ आठ उपनिषद, बीस स्मृतियों का अध्ययन कर आपने वैदिक ग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त किया। गीता की सात संस्कृत टीकाओं का अध्ययन आपने किया है। कुराण शरीफ और कुराण हदीस भी आपने पढ़ा। अन्य धर्मों के प्रमुख ग्रन्थ भी आपने पढ़े। इस प्रकार अध्ययन के क्षेत्र में आपने बहुत उन्नति की।

आप तुलनात्मक अध्ययन के पक्षधर हैं। किसी मत की आलोचना करने की अपेक्षा आप उसे समझने में अधिक रुचि रखते हैं। आपका मानना है कि जैनाचार्यों ने अपने अनुभव के बल पर जिनेन्द्रवाणी का जो लिपिकरण किया है, वह पूर्णरूप से यथार्थ है। समयानुसार प्रतिपादन करने की शैली

में परिवर्तन हो जाये तो जैनधर्म विश्वधर्म बन कर वैश्विक समस्याओं का निराकरण करने में सहयोगी बन सकता है।

जिनवाणी की सेवा करने वाले साधुओं में आपका नाम शीर्षस्थ है। श्रावकों को आप स्वाध्याय करने की प्रेरणा देते हैं। समाज को प्रकाशक के द्वारा निर्द्धारित किये गये मूल्य से आधे मूल्य में ग्रन्थ उपलब्ध हो - ऐसे प्रयत्न आपने अनेक स्थानों पर किये।

अमीर-गरीब, प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध आदि भेद आपके चरणों में नहीं पाया जाता। यही कारण है कि जो एक बार आपके चरणों में जुड़ जाता है, वह आपका होकर रहता है। जिनवाणी की सेवा आपका मूल ध्येय है। यह सब सच होते हुये भी आप अपने आवश्यक कर्त्तव्यों के परिपालन में भी उतने ही नियमबद्ध हैं।

आपका आहार शुद्ध और सात्विक है। यही कारण है कि आपको औषधियों के सेवन करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। शिष्यों को भी आप यही समझाते हैं कि भ्रमरवृत्ति से आहार करो तो कभी कष्ट नहीं होगा। भोजनसंयम को आप सकलसंयम का मूलस्तम्भ मानते हैं।

गुरुदेव ने आपकी पात्रता को विलोक कर १९९७ में ही आपके **आचार्यपद** की घोषणा कर दी। गुरुदेव का आदेश **रत्नत्रयनिधिद्धार** नामक ग्रन्थ में प्रकाशित भी हो गया, किन्तु आपने उस पद का कभी प्रयोग नहीं किया।

दिनांक २०-६-२००४ का वह शुभ दिन भी आया। नरवाली (राजस्थान) में परम पूज्य सिद्धान्त-चक्रवर्ती, आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज ने अपने सुयोग्य शिष्य पर आचार्यपद के संस्कार किये।

यह महानतम आश्चर्य था कि उस समय आचार्यश्री एक पाटे पर विराजमान थे और आचार्यपद को ग्रहण करने वाला शिष्य सिंहासन पर आरूढ़ था। मन्त्र-संस्कार के मध्य में जब पैरों में चन्दन के द्वारा तिलक निकालने का अवसर आया, तब गुरुदेव ने स्वयं ही अपने शिष्य के पैरों पर तिलक लगाया। स्वयं ने छत्तीस मूलगुणों के संस्कार किये।

प्रतिष्ठाचार्यश्री महावीर जी जैन (भिंगला वाले), स्थानीय प्रतिष्ठाचार्यश्री कारुलाल जी जैन तथा संघसंचालिका मैनाबाई ने सिंहासनशुद्धि, पादपूजन आदि सम्पूर्ण संस्कार किये।

प्रवचन में आचार्यश्री ने एक महत्त्वपूर्ण रहस्य को उद्घाटित किया कि **हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालक पद पर नियुक्त करते हैं।** अर्थात् गुरुदेव ने उस दिन केवल आचार्यपद ही नहीं दिया था, अपितु उत्तराधिकारीत्व भी उद्घोषित किया था। आचार्यश्री का वह प्रवचन आचार्यश्री के आशीर्वाद से प्रकाशित होने वाली **अंकलीकर वाणी** (जुलाई २००४) नामक मासिक पत्रिका में यथावत् प्रकाशित हुआ है। उसी का प्रकाशन **अक्षय-ज्योति** के आचार्यपद विशेषांक (अक्तुबर, २००४) में हुआ है। आपने २००४ का वर्षायोग ओबरी (राजस्थान) में किया तथा वर्षायोग के पश्चात् आप पुनः गुरुदेव के पास खमेरा पहुँचे।

आपने गुरुदेव से निवेदन किया कि प्रायश्चित्तग्रन्थ रहस्यग्रन्थ है। इसका अध्ययन गुरुमुख से हो तो अधिक उचित है। अतः आप मुझे इस ग्रन्थ का अध्ययन करा दीजिये। अपने शिष्य के इस निवेदन को सुन कर अपने उत्तराधिकारी को प्रायश्चित्तशास्त्र में पारंगत करने के लिये स्वयं गुरुदेव ने उस शास्त्र का अध्ययन कराया। इस अध्ययन में परम पूज्य आचार्यश्री चन्द्रसागर जी महाराज आपके सहपाठी थे।

ईसवी सन् २००७ में आचार्यश्री का वर्षायोग मध्यप्रदेश की सांस्कृतिक भूमि मन्दसौर नगरी में हुआ। एक दिन **राजीव गाँधी शासकीय महाविद्यालय** में **कालिदास समारोह** का आयोजन किया गया था। उस कार्यक्रम में आपको भी आमन्त्रित किया गया था। इस कार्यक्रम का आयोजन महाविद्यालय के अतिरिक्त कालिदास अकादमी-उज्जैन तथा मध्यप्रदेश सांस्कृतिक संरक्षक संघ-भोपाल ने किया था। चर्चा का विषय था-**मालवांचल और कवि कालिदास।** कार्यक्रम के अन्त में आपका मांगलिक प्रवचन हुआ। आपने कालिदास के दूतकाव्य पर आधारित जैन दूतकाव्य ग्रन्थों का परिचय प्रस्तुत किया। प्रवचन के उपरान्त तीनों संस्थाओं के संयुक्त तत्त्वावधान में आपको **विद्या-वाचस्पति** यह अलंकरण प्रदान किया गया।

मन्दसौर के वर्षायोग में ही आपने **समग्र जैन ग्रन्थकोश** जैसे संगणक कोश की महानतम रचना की। जैन ग्रन्थों की सुरक्षा के लिये किया गया यह अनुपम उद्यम है। आपके द्वारा **जैन ग्रन्थ संग्रह** नामक संगणक कोश की भी रचना की गई है। आपके द्वारा बालकों का ज्ञानवर्द्धन करने के लिये

जिन संगणक क्रीड़ालयों का निर्माण किया गया, उनके कारण जिनशासन की अभूतपूर्व प्रभावना हो रही है।

सन् २००९ का वर्षायोग मदनगंज-किशनगढ़ (राजस्थान) में सम्पन्न हुआ। गुरुदेव के आदेश को प्राप्त कर आपने वर्षायोग के तत्काल बाद वहाँ से विहार किया। विशाल संघ के साथ मात्र ढ़ाई माह में आपने चौदह सौ किलोमीटर का विहार पूर्ण किया। दिनांक १८-१-२०१० को प्रातःकालीन बेला में आप गुरुचरणों में पहुँचे। वहाँ संघ और समाज के द्वारा जो स्वागत हुआ, वह अभूतपूर्व था।

दिनांक २४-१२-२०१० को कोल्हापुर में परम पूज्य आगमकोविद, आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज का प्रातः कालीन बेला में (ब्रह्ममुहूर्त) में समाधिमरण हुआ। २००४ में गुरु महाराज के द्वारा नरवाली में की गई उद्घोषणा के अनुसार उस दिन से आप उनके पट्टाधीश बन गए। पट्टाचार्यपद की अनुमोदना परम पूज्य स्याद्वादकेसरी, गणधराचार्यश्री कुन्थुसागर जी महाराज तथा परम्परा के लगभग पच्चीस आचार्यों ने की। यह आपकी सर्वप्रियता का उदाहरण है। इतने बड़े पद पर अवस्थित रहते हुये भी आप अहंकार के द्वारा अस्पर्शित हैं।

दिनांक ११-५-२०१३ को आपका पच्चीसवाँ दीक्षादिवस था। उस दिन श्रीक्षेत्र कुन्थुगिरि में आपके द्वारा लिखित, रचित और अनुवादित पचहत्तर ग्रन्थों का विमोचन परम पूज्य गणधराचार्यश्री कुन्थुसागर जी महाराज के मांगलिक सानिध्य में सम्पन्न हुआ। यह वैश्विक कीर्तिमान था। इस कीर्तिमान के लिये **अॅमेझिंग विश्व रिकॉर्ड** ने आपको पुरस्कृत किया और **लिमका बुक ऑफ रिकॉर्डस्** में आपका नाम अंकित हुआ।

दिनांक ४-५-२०१७ को आपके द्वारा लिखित छब्बीस विधान कृतियों का भी विमोचन हुआ।

आप अनाग्रही व्यक्तित्व के धारक हैं। आपका विहार किसी भी क्षेत्र में हुआ हो, आपने जिनालय की परम्परा का विरोध नहीं किया। आप मानते हैं कि जिस जिनालय में जो परम्परा चल रही है, उसे यथावत् रखना चाहिये, जिससे सामाजिक एकता भंग नहीं होती। आपका जीवन सहज और सरल है। आपकी चर्या में आगम की मर्यादा स्पष्टरूप से झलकती है। शिष्यों के

प्रति आपका अगाध वात्सल्य है। जिनवाणी के प्रति आपकी अपूर्व भक्ति है। गुरु-परम्परा के प्रति आप अत्यन्त एकनिष्ठ हैं। परसंघीय साधुओं के प्रति आपका अनुराग विलोकनीय है। प्रत्येक संघ का गुणानुवाद आप मुक्तकण्ठ से किया करते हैं। आपकी स्मरणशक्ति की जितनी प्रशंसा की जाये, उतनी ही कम है। श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र की भाँति आपका तप भी अनुपम है। इसका अनुमान इससे ही लगाया जा सकता है कि २०११ से २०१७ के छह वर्षीय कालखण्ड में आपने पाँच सौ से अधिक उपवास किये हैं। आप अनेक संघों के साधुओं के अध्ययन में सहयोगी बनते रहे हैं। आप क्षपक की जिस प्रकार सेवा करते हैं, वैसी सेवा देखने अन्यत्र नहीं मिल सकती। आप संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, मराठी, हिन्दी इन पाँच भाषाओं में साहित्य की रचना करने में समर्थ हैं। कविताओं का निर्माण, भजनों की रचना करना एवं मुक्तकों की रचना करना आपका छन्द है।

आपका ज्ञान और ध्यान नित्य ही प्रवर्द्धमान रहें, आपके द्वारा की जाने वाली जिनवाणी की सेवा नित्य प्रति प्रगति करती रहें, आपका शिष्यरूपी उपवन निरन्तर हँसता-मुस्कुराता रहें, आपके द्वारा अपूर्व धर्मप्रभावना हों, आपकी अमृतवाणीरूपी गंगा में अवगाहन करके भव्यसमूह शान्ति प्राप्त करें, आपकी कीर्ति जगद्-व्यापिनी बन कर जग के मैल का अपहरण करें, आप दीर्घायु होवें - मैं यही मंगल कामना करती हूँ।

वर्तमान में अनेक आचार्य-परमेष्ठी इस भूतल को पवित्र कर रहे हैं। उनमें आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज का स्थान अँगुठी में नगीने **के भांति है।**

वे ऐसे आचार्य हैं, जिन्होंने अपनी दादी-माता-पिता और बहन को भी दीक्षित किया। आगम का तलस्पर्शी ज्ञान और तप का संगम उनके जीवन में देखा जा सकता है।

वे ऐसे आचार्य हैं, जिन्होंने संगणक पर अपूर्व ग्रन्थकोश का निर्माण किया, जिसके कारण अनेक स्वाध्यायप्रेमी बन्धु घर बैठे मूल ग्रन्थों का स्वाध्याय कर पा रहे हैं।

गुणगम्भीर, आर्षमार्ग के प्रचारक, निर्भिक वक्ता, चतुर्थ-पट्टाधीश, परम पूज्य आचार्यश्री को मेरा शत-शत नमन।

सुविधि-अष्टकम्

देवागमगुरुभक्त-विशदा कीर्तिधारकः।
ज्ञानवैराग्यसिद्ध्यर्थं, वन्दे सुविधिसागरम्।।१।।

क्षमादि श्रेष्ठधर्माणां, ह्याचाराणां च पालकः।
शुद्धसम्यक्त्वलाभार्थं, वन्दे सुविधिसागरम्।।२।।

तपस्या चक्रवर्तीश्च, सन्मार्गस्य प्रदीपकः।
ज्ञानध्यानतपोपूतो-वन्दे सुविधिसागरम्।।३।।

षडावश्यककार्याणां, त्रिगुप्तेश्च प्रपालकः।
कामसुभटजेता त्वं, वन्दे सुविधिसागरम्।।४।।

सौम्यमूर्तिर्महाध्यानी, भव्यजीवप्रबोधकः।
हितोद्योगी मृदुभाषी, वन्दे सुविधिसागरम्।।५।।

दीक्षाशिक्षाप्रदातारं, शिष्यानामनुग्राहकः।
श्रेयोमार्गे सदारूढं, वन्दे सुविधिसागरम्।।६।।

हृदये वसते शुद्धिर्वचने च सरस्वती।
काये चरित्रधर्त्तारं, वन्दे सुविधिसागरम्।।७।।

इदं स्तोत्रं पठेन्नित्यं, त्रैविद्यं स्नेहपूर्वकम्।
लभते स च निर्वाणं, हीदमपि न संशयः।।८।।

रचयित्री

पूज्या बालब्रह्मचारिणी, आर्यिकाश्री
सुस्नेहमती माताजी

उपलब्ध साहित्य

ग्रन्थसाहित्य

अणुपेहा
दंसणसारो
ज्ञानांकुशम्
झाणाज्झयणपाहुड
करलक्खणं
कषायजयभावना
श्री मल्लिनाथ पुराण
णाणसारो
णयलक्खणं
नवपदार्थनिश्चय
प्रमाणप्रमेयकलिका
प्रश्नोत्तररत्नमालिका
रत्नमाला
सज्जनचित्तवल्लभ
संबोह पंचासिया
शासनचतुस्त्रिंशिका
सुगन्धदशमी कथा
स्वतन्त्रवचनामृतम्
सिद्धंतसारो
वैराग्यमणिमाला
व्रतफलम्
श्रीपुराण
श्री गौतमस्वामी चरित्र
श्री सुदर्शन चरित्र
दव्वणिमित्तं
प्रश्नमाला

पाठ्यसाहित्य

भगवान अनन्तवीर्य
आओ, खेलें क्रिकेट
धर्म और संस्कृति
धर्मचक्र
एक के बाद एक
ज्ञाननिधि क्रीड़ालय
कौन बनेगा जिनवाणीनन्दन?
कैद में फँसी है आत्मा
कालसर्पयोग : एक भ्रम
रहस्यों का भण्डार : महामन्त्र णमोकार
पंचकल्याणक : स्वरूप एवं विश्लेषण
परम प्रामाणिक अनुयोग : प्रथमानुयोग
साँपसीढ़ी प्रतियोगिता
जैनधर्म में स्तुति : एक अध्ययन
सुविधि चिन्तनपुष्प
सुविधि आसनचिकित्सा
सुविधि चिकित्सासार
सुविधिप्रश्नमणिमाला
स्वाध्यायक्रमदर्पण
सुविधि वचनपराग
स्वास्थ्य ही जीवन
श्रीक्षेत्र श्रवणबेलगोला
स्मरणशक्ति का विकास कैसे करें?
तोल मोल के बोल
तीर्थंकर-दर्शन

विधानसाहित्य

श्री आदिनाथ विधान
श्री अजितनाथ विधान
श्री सम्भवनाथ विधान
श्री अभिनन्दननाथ विधान
श्री चन्द्रप्रभ विधान
श्री वासुपूज्य विधान
श्री कुन्थुनाथ विधान
श्री मुनिसुव्रतनाथ विधान
श्री सम्मेदशिखर विधान
श्री पंचकल्याणक विधान
श्री कल्याणमन्दिर विधान
श्री भक्तामर विधान
श्री तत्त्वार्थसूत्र विधान
श्री रोटतीज व्रत
श्री रविव्रत मण्डल
श्री जिनगुणसम्पत्ति व्रत
श्री श्रुतस्कन्ध विधान
श्री सुगन्धदशमी व्रत विधान
श्री निर्दुःखसप्तमी व्रत विधान
श्री रत्नत्रय व्रत विधान
श्री तपःशुद्धि विधान
श्री सहस्रनाम विधान
श्री दर्शनविशुद्धिभावना विधान
श्री कल्याणभावना विधान
श्री बाहुबली विधान

विधानसाहित्य

अष्टाह्निका विधान
चन्दनषष्ठी विधान
एकीभाव विधान
ज्ञानपच्चीसी विधान
कर्मदहन विधान
कवलचन्द्रायण विधान
कुन्थुगिरि विधान
लघु सिद्धचक्र विधान
मृत्युंजय विधान
णमोकारमहामन्त्र विधान
पंचमेरु विधान
पुष्पांजली विधान
रत्नत्रय (बृहत्) विधान
सर्वदोषप्रायश्चित्त विधान
शान्ति विधान
शान्तिनाथ विधान
शान्तिभक्ति विधान
धवला विधान
श्रेयांसनाथ विधान
गणधरवलय विधान
ज्ञानार्णव विधान
त्रेपनक्रियाव्रत विधान
वर्तमान चतुर्विंशतितीर्थंकर विधान
विद्यमान विंशतितीर्थंकर विधान
व्रतभावना विधान
विषापहार विधान

इनके अतिरिक्त अनेक प्रकार के और अनेक विधाओं के साहित्य की रचना आपने की है, जो जन-जन को प्रबोधित करने में सक्षम है।